भरां भरां यह कह्वियं। गह्वियं भगताय अंगयं नेहं॥
भिड़े तु चक्रम मंटी। दही निय अब यो देहं॥
छं० ॥१८८॥ रू० ॥ ९६ ॥

दूहा ॥ बांबी फिर अंगह वली। अंग उदैही जाम॥
भीन सबद मुष निक्कसे। धीर धीर कै राम॥
छं० ॥ १९० ॥ रू० ॥ ९७ ॥

तब धरि मधि कढ्यौ सु रिषि। दिष्षि प्रबल तप पार॥
बालमीक रिषि सो भयौ। सुनि गिरि सुअन बिचार॥
छं० ॥ १९१ ॥ रू० ॥ ९८ ॥

हिमालय के मध्यम पुत्र नंद का वशिष्ट के साथ आना स्वीकार करना॥

कवित्त ॥ सुनि सु बचन गिरि सुअन। सर्व बिधि राम बाच रचि॥
मध्य पुच गिरि नंद। सोय उच्चस्यौ वाव सचि॥
हौं सु पंग बिन पाय। क्रंम्मि सक्कों न राह दुर॥
जाय ध्यरौं षित षात। करौ उद्धार वाव धुर॥
पित बाव राम सज्यौ सु बन। बाव सु हरिचंद अव्व वहि॥
सोइ बाच तात कत कज्ज रिषि। कोइ सचुक्कहि मुष्य महि॥
छं० ॥ १९२ ॥ रू० ॥९९॥

वशिष्ट का अर्बुद नाग को कहना कि जो तू नन्द गिरि को उठा ले चले तो हमारा कार्य सिद्ध हो॥

पद्धरी ॥ अर्बुदा अ वल्ल अर्बुदनि नाम। क्रिन काम पयह षोरौ सु काम॥
धर नंद नंद नंदन प्रमान। उच्चार सार लै जाहु थान॥ १९३ ॥

---

९६ पाठान्तर-बांकी। निकसै। कैं॥

९७ पाठान्तर-द्विषि। रिष॥

९८ पाठान्तर-गिगिरं। सोइ। हों। उच्चयौ। पाइ। क्रमि। क्रंमि। सकों। सक्कौं सक्कैं। परों। करों। कोई। चुक्कहि। मुख॥ इस रूपक की पांचवीं तुक के बाच और सज्यौ शब्दों के बीच में राम शब्द किसी किसी पुस्तक में लेखक ने लिखना छोड दिया है। तथा इसी तुक के दूसरे पाद का पाठ हमारे पाठ के सिवाय किसी किसी पुस्तक में "पिता बाच सिर अबु वहि" करके भी है॥

१०० पाठान्तर-इस की पहिली तुक के पहिले पाद का पाठ हमने सं० १६४७ की

हंधीं सु गाय वन व्याघ्र क्रोध। आयो सु राज राजन समोध॥
कुरु लाय करिय करुना सु धेन। छंडाय राज राजन बलेन॥ १९४॥
तन धरिग कह्यौ जज्जर सरीर। दिष्ष्यौ न सिंघ तहां निमष तीर॥
सु प्रसन्न गाय धेनक सु रिष्षि। कीनौं जु अंग द्रप्पक विसिष्ष॥ १९५॥
थन थान दिष्षि अर्बुदा राज। रिष कहै जोग हो चलन साज॥
छं०॥ १९६॥ रू०॥ १००॥

अर्बुद नाग का कहना कि जो मेरे नाम से तीर्थ प्रसिद्ध हो तो मैं नंद गिरि को उठा ले चलूं॥

कवित्त॥ तब तवि अर्बुद नाग। मित्त गिर नंद चित्त चिय॥
हौं उद्धरि लै जाउँ। तिथ्थ मो नाम नाम दिय॥
तब नंदी उच्चर्‍यौ। होहि तो नाम तिथ्थ हित॥
सु रिष्षि कज्ज सुद्धरहि। सु रिन उद्धरहि वाच पित॥
थप्पी सुबत्त अर्बुद उरग। सु रनि सीस नंषे सु मन॥
पय परसि मात पित बंध ब्रग। सुअ सुहेम कीनो गमन॥
छं०॥ १९७॥ रू०॥ १०१॥

अर्बुद नाग का नंदगिरि को उठा लाकर बिल में रख देना॥

कवित्त॥ तब निय अर्बुद नाग। कंध उद्धर्‍यौ नंदि नग॥
मग्ग अग्ग गिरि राज। रिष्षि संचर्‍यौ सथ्थ अग॥
साध सिद्ध सुर सुरह। सुमन नंषे उच्चरि सह॥
रिषि अग्ग गिरि पच्छ। आय संपत्त तथ्थ षह॥

पुस्तक से रक्खा है। सोसाईटी की छापी हुई तथा अन्य पुस्तकों में "अर्बुदा सचल अर्बुदूत नाम" करके पाठ है। क्रत। पोरैं। गाव। त्रिन। कुरुना। कयौं। सीह। तिहां। कितैं। द्रपक। द्रप्यक। जो। गहूं॥

१०१ पाठान्तर-हित। तिथ। उच्चयौं। हैं। हितो। सुरसि। सुद्ध। रहि। उद्ध। रहि। वत। अरबुद्द। धंद। इस रूपक की दूसरी तुक का दूसरा पाद और तीसरी तुक जो बेदले वाली पुस्तक सोसाईटी में है उस में लेखक की भूल से नहीं है अन्य सब में हमारा लिखा पाठ है॥

१०२ पाठान्तर-उद्धयौं। नन्दिग। अग्गा। गिरिराज। रिषि। संचयौं। अग्ग। सिध।

प्रविस कियो गारत्त गिरि । जय जय वचन सरीर हुँग्र ॥
भै मगन सुतन सव्वै सु गिरि । उवस्यौ नाक सुनाग धुग्र ॥
छं० ॥ १९८ ॥ रू० ॥ १०२ ॥

बिल का पुर जाना और पुष्प वृष्टि सहित जैजैकार होना ॥

दूहा ॥ उवस्यौ नाक सु नाग धुग्र । दिव ग्रस्तुति परमान ॥
पुह्प दृष्टि चत्थां करिय । जय जय बंध्यौ तान ॥
छं० ॥ १९९ ॥ रू० ॥ १०३ ॥

नग का हिलना ॥

दूहा ॥ गात सकल गिरि जात को । सब बूड्यौ सम नाग ॥
उवरि नास सैलुह नर्चा । सो हलही बिन लाग ॥
छं० ॥ २०० ॥ रू० ॥ १०४ ॥

नग के हिलने से वशिष्ट चिंता कर ईश आराधन करने लगे ॥

दूहा ॥ नास सुहल हल्यौ सुनग । उर अति चिंता जग्ग ॥
अति आतुर वाचिष्ट रिषि । ईस अराधन लग्ग ॥
छं० ॥ २०१ ॥ रू० ॥ १०५ ॥

वाचिष्ट ऋषि ने महादेव का यह आराधन किया ॥

साटक ॥ ईसंजा गिरिजानने वगरयं । उच्छंग मातंगिनी ॥
चर्मंजा वद्दजामवं जलजं । वुंदं तयं उज्जलं ॥
रख्खं जारति कर्न कामति मलं । दलयंति तीयं पुरं ॥
त्रिपुरारिं तन तुंग तारन गुरं । जैजै हरं ईसयं ॥
छं० ॥ २०२ ॥ रू० ॥ १०६ ॥

उचरि । आगे । पक्ष । संपन । तय ॥ इस की अंत की तुक का पाठ किसी किसी पुस्तक में "भू मग सुतन सबे सुगिरि । उवर्यो नाक सु नाक धुग्र" है ॥

१०३ पाठान्तर–उवर्यो नाक । हथां ॥

१०४ पाठान्तर–यह रूपक सं० १६४० की पुस्तक में नहीं है और जब तक कि वह इस से भी प्राचीन पुस्तक में नहीं मिले तब तक उस को क्षेपक नहीं कह सक्ते । सोह । लही । बुड्यौ ॥

१०५ पाठान्तर–नाग । वशिष्ट । आराधन । लग ॥

१०६ पाठान्तर–उछंग । चलजं । जलदं । रिपं । करन । दलयंति ॥

भुजंगी ॥ नमो आदि नाथं स्वयंभू सनाथं । नहीं मात तातं न को अंगि घातं ॥
जटा जूठयं सेषरं चंद्र भालं । उरं हार उद्दारयं रुंड मालं ॥ २०३ ॥
अनीलं असन्नं उपव्वीत राजं । कलं काल कूटं करं सूल साजं ॥
धरं अंग ओधूत विभूत ओपं । प्रलै कोटि उग्रंसि कालं अनोपं ॥ २०४ ॥
करी चर्म कंधं हरी पारिधानं । वृषं वाहनं वास कैलास थानं ॥
उमा अंग वामं सु काल पुरुष्यं । सिरं गंग नेत्रं त्रयं पंच मुष्यं ॥ २०५ ॥
नमः संभवायं सरव्वाय पायं । नमो रुद्रयायं वरद्दाय सायं ॥
पसूपत्तए नित्तए मुग्गयाए । कपर्द्दी महादेव भीमं भवाए ॥ २०६ ॥
अघघ्राय ईसानए त्रंबकाए । नमो भ्रम्मए घातए अड्ढकाए ॥
कुमारो गुरव्वे नमो नील ग्रीवे । नमो व्याधए बाधए द्रिक्क जीवे ॥ २०७ ॥
नमो लोहिने नील सिष्पंडए तं । नमो शूलिने चक्षुषे हिव्यए तं ॥
वसूरेतवे स्वव्वदेवस्तुतेवं । नमो पिंग जाटिंस्सए देव देवं ॥ २०८ ॥
नमो तप्प मानाय ब्रष्पं धुजाए । नमो ब्रह्मचारी त्रयंब्रह्मकाए ॥
सिवं त्रातमे त्रातगे स्वर्गत्राए । नमो विस्वमावित्तए विस्वराए ॥ २०९ ॥
नमस्ते नमस्ते नमो सीतताए । नमो सर्वव्वकायने संकराए ॥
नमो ब्रह्मवक्काय भूतं पिताए । नमो वाचपे त्रिस्वपे भूतपाए ॥ २१० ॥
नमो सीससाहस्सए नीतएसं । सहस्संभुजा नैंन साहस्स तेसं ॥
नमो पादसाहस्स आसंखकर्नै । नमो बन्हि, हीरन्न हीरन्यवर्नै ॥ २११ ॥
नमो भक्ति आकंपनं संभु देवं । थिरं रिद्धि दाता मनं वच्च सेवं ॥
प्रसन्नो भवो ईस तव्वैं न कव्वै । तनं ताप विन्नासए चित्त तव्वै ॥
छं० ॥ २१२ ॥ रू०॥ १०७ ॥

१०७ पाठान्तर–स्वंभू । समार्थं । नही । मंगी । चंदभालं । उर । संडमालं । असनं । उपंवीत । कलंकालकूटं । विभूत । सिकालं । अलोपं । करि । बधं । वृषवाहनं । वासं । थांनं । दामं । कुरष्य । गंगा । नैंनं । उद्रपायं । सरवाय । वरद्दाय । पसू । पत्त । ए । नित्त । ए । मुग्ग । जाए । कपद्दी । कर्पद्दी । मघंघ्राय । इसं । नए । ध्रम्म । ए । धात । ए । गुर्व्वं । नल । व्याध । ए । बाध । ए । द्रिच्छ । सिष्पंड । एतं । दिव्य । एतं । वसूदेवते के सबदेवं । स्तुतेवं । ब्रघंध । जाये । त्रयब्रह्म । काए । श्वर्ग । त्राये । विश्वमा । वित्तए । नमस । ते नमस । ते । सीत । ताए । साहस । एनीत । एसं । सहस । नैन । सहस । आसंख । कर्नै । हिरन्य । संभा विनास । ए । चित ॥ सं० १६४७ की पुस्तक में इस छंद की ८ वीं तुक में का नित्तए शब्द नहीं है ॥

वशिष्ट के वचन सुन महादेव का प्रत्यक्ष हो वर मांगने को कहना ॥

चैापाई ॥ सुनि मुनि वचन मोद मन ईसं । आय षरो रह्यौ उद्धरि सीसं ॥
बर! बर! बानि जानि मन मंगगहु । जंपहि ईस आस जिहि जग्गहु ॥
छं० ॥ २१३ ॥ रू० ॥ १०८ ॥

मंगहु मुनि सज्जन गुन गुन बर । रह्नै कित्ति जित्ती जिहि धुर धर ॥
ता कित्ती मुकतीह सों लिज्जै । ब्रह्मासन आसन डोलिज्ज ॥
छं० ॥ २१४ ॥ रू० ॥ १०९ ॥

ईस का स्वरूप देख ऋषि का मुदित होना ॥

चैापाई ॥ देषि सरूप ईस मन उम्मदि । जै भै जीह धन्य वानी बदि ॥
गैारं कपूर तेज तन उद्दित । रिषि रोमंचित तब मन मुद्दित ॥
छं० ॥ २१५ ॥ रू० ॥ ११० ॥

मुद्दित मन उद्दित तन भारी । हरि वैकुंठ ईस मनचारी ॥
अर्बुद गिरि धरि ध्यान सु ईसं । करै काल तिहि काल जगीसं ॥
छं० ॥ २१६ ॥ रू० ॥ १११ ॥

वशिष्ट ऋषि का महादेव को नमस्कार करना ॥

साटक ॥ चैनैनं त्रिजटेव सीस त्रितयं । त्रैरूप त्रीसूलयं ॥
त्रद्देवं त्रिदिसा त्रिभू त्रिगुनयं । त्रीसंधि वेदत्रयं ॥
त्रैरग्निं त्रयलच्छि काल त्रितयं । ग्रामं त्रयं त्रैवयं ॥
गंगा त्रै त्रिपुरारि भासित तनुं । सोयं नमः संभवे ॥
छं० ॥ २१७ ॥ रू० ॥ ११२ ॥

१०८-१०९ पाठान्तर-मंगहुं । जग्गहुं ॥ रत्तै और कित्ति शब्दों के बीच में "रै" शब्द पाठ सं० १६४७ की पुस्तक में नहीं है और इधर के समय की लिखित पुस्तकों में है । धुर धुर । कीती । मुक्तीह ॥

११०-१११ पाठान्तर-उंमदि । गोरक । पूर ॥

११२ पाठान्तर-त्रिजटेवसीस । त्रयलछिकाल । त्रितयंग्राम ॥

प्रमथाधिपति ने आनन्दित होकर वर मांगने को कहा ॥

दूहा ॥ आनंदौ प्रथमाधिपति । बर ! बर ! बंदौ बानि ॥
रिषि मंगहु उतकंठ मन । सोइ समप्पौं आनि ॥
छं० ॥ २१८ ॥ रू० ॥ ११३ ॥

वशिष्ट ऋषि का नंदगिरि को अचल करने का वर मांगना ॥

दूहा ॥ फिरि रिषि जंप्यो संभु सों । जो तुट्ठौ मुझ भाग ॥
नग्ग चलंतौ अचल करि । फुनि सज्जौ सिर बास ॥
छं० ॥ २१९ ॥ रू० ॥ ११४ ॥
सो आबू गिरि राज गुरु । सुर गिर सम सैलास ॥
त्रिपथ नाम मुनि देव का । बसि रु कियो कैलास ॥
छं० ॥ २२० ॥ रू० ॥ ११५ ॥

महादेव का पर्वत को अचल कर उस में अचल नाम से विराजना ॥

कवित्त ॥ तब सु ईस मन मुदित । पानि चंप्यौ गिर गौरव ॥
अचल अचल कहि अचल । भयौ अचलेस नाम तब ॥
सुथिर भयौ नग नंदि । अप्प सिर वास सु सज्यौ ॥
उभय आय तिहि थान । सगन प्रमथाधिप रज्यौ ॥
गिरि नंद नाम हेमद्द सुतन । अबुद नाग सु मित्र मन ॥
तिहि नाम त्रिविध भय तिथ्थ हर । पारस अप्पन अर्थ तन ॥
छं० ॥ २२१ ॥ रू० ॥ ११६ ॥
कवित्त ॥ अचल नाम कहि अचल । अचल विद्या अभ्यासिय ॥
अर्बुद गिरि थिर थप्यौ । बियौ बानारस बासिय ॥
उद्दित नाम इक बरष । मुत्ति लब्भोति जगत गुर ॥
इहत नाम इक दीह । करै उपबास होइ नर ॥

११३-११५ पाठान्तर-प्रथमाधिपति । बानी । समप्यों ॥ ११३ ॥ सों । तुठो । भग्ग बास ॥११४॥ गुरं । सं० १६४७ की में "मुदगिर सम सैलास" और सं० १७७० की में "सुर गिर सम सैलास" और सं० १८५९ में "मेर समल सैलास" पाठ हैं ॥ त्रिपथा । ताप । सुनि बसि । हक्रियो ॥ ११५ ॥
११६ पाठान्तर-अच । प्रथमाधिपं । रंज्यौ । नम । तिथ । अथि ॥

बाना रभंति बारानसिय । आबू अर्बुद उद्धरिय ॥
जट बिकट जाल बिभ्भूति रंग । सुरग मुकति ढिग ढिग फिरिय ॥
छं० ॥ २२२ ॥ रू० ॥ ११७ ॥

आबू को अचल देख कर वशिष्ट का प्रसन्न होना और अन्य ऋषियों को वहां यज्ञ के लिये बुलाय जप तप और वास करना ॥

पद्धरी ॥ अग अचल द्दिष्षि वाशिष्ट रिष्य । मन मुदित भयौ सम आय सिष्य ॥
हर वासदेव सब गुन समान । आवरन रिद्धि चित चिंत थान ॥२२३॥
आभासि सिष्य गौतमह तथ्थ । आचर्यौ बास अनि रिष्य सथ्थ ॥
आभासि रिष्य अनेक तान । संबोधि बोलि प्रथु प्रियुक नाम ॥२२४॥
देवलह असित अंबरिष सूत्र । सौमिष सप्प माली विभूव ॥
मह मंडन सनक जैनेय पैल । दालभ्य बक्क सुमंत अैल ॥ २२५ ॥
द्वैपाय किस्न शूनंसि राय । तैतरिय जअबक्की सुनाय ॥
जैमनिय भव्व वैसंपायन । हर्षनह लोम असुहोच जान ॥ २२६ ॥
मंडत्र अरनि कौसिक्क दाम । उष्णीष चिवन पर्णाद बाम ॥
घटजात सुबल मोजायनेय । बलवाक परासर वायवेय ॥२२७॥
सचिवाक जात क्रन क्रन्न माल । सनिवाक क्रिताश्रम सुचि पाल ॥
सिषि बांनस पर्वत पारिजात । अगस्ति मारकंडे सुभाति ॥२२८॥
पाविच पानि सर्वन्य रभ्य । किरनाषकेत भ्रगु मेष सभ्य ॥
जंघाव शालकी कोप वेग । गालम हरीय ब्रह्म अगेग ॥२२९॥
कौडिन्न बंध माली सनक्क । सानंद सनातन कच वक्क ॥
सांडिल करक वाराह पंग । कौमार अश्व हय घोष मंग ॥२३०॥
वेनीय जघन जघ नासकेत । कन्हं कलाप वक्रीव सेत ॥
अष्टावक्र उद्दालकेय । च्यवनह कपिल मातंग जेय ॥ २३१ ॥

---

११७ पाठान्तर-धयौ । बीयो । लभ्यौ । तिजगत । वानार । भंति । वानारसीय । उद्धरीय । मुति ॥
११८ पाठान्तर-द्दिषि । वाचिष्ट । सिष । आयौ । प्रियक । अंर्कवा । विसूत्र । सप्प । ध्रुव । हरष । नह । मंडप । कौसिक । उष्णीक । पनद्दिवाम । घट । जात । बाल । बाक । धालजांक । वाय । वेय । सचि वाक । क्रच । क्रनमाल । सनि । वाक । क्रिताश्री । सिषि । वांनस । पर्वत । भाल । की । गालं । महि । रिय । कोंडिन । सांडिल । वेनी । जय । घन । घना । सकेतृ । कन्ह । वसेत अष्टाह ।

माधव्व गरग अनेक रिष्य। आए सु अन्य तहां समह सिष्य ॥
आचवान मंच बल तप्प सथ्थ। सब देव रिष्य आए सु तथ्थ ॥ २३२ ॥
कालिंद्र गंग सरसत्ति आय। अनुसरिय बहु सब सोथ नाय ॥
ऊषधी स्रब्ब मनि सब्ब धान। बर वृष्य लता फल पुहप पान ॥ २३३ ॥
जाजन्य जजन अधियन अध्याय। लग्गेसु करन रुचि रिष्य आय ॥
आचवान बान उचान जाप। लग्गे सु करन रुचि दृष्ट ताप ॥ २३४ ॥
जप होम मंच धारना ध्यान। आरंभ रिष्य लग्गे सु ग्यान ॥
आराधि सकति आभासि नाम। संचास कीन गिर उंच धाम ॥ २३५ ॥
आदरस रिष्य संबास कीन। आश्रम्म स्रब्ब क्रम काज चिन्ह ॥
जगनह जाप अध्याप होम। आराध उंच आयास धोम ॥ २३६ ॥
प्रीनंत देव सुव्वास आय। सब मिले चंद इंदार काय ॥
षीसेष मंच जंचं गुरेन। बंधे जु मंच कर आप देन ॥ २३७ ॥
करि भसम देव देवल लहीव। बिस्साह अम्रत पावै सु पीव ॥
अति भम्म क्रम्म दृष्षे अनंद। आए सु निसाचर कलन मुंद ॥ २३८ ॥
झरंत रिष्य मंगिय कहर। तिन समत भूमि षह नग्ग नूर ॥
चित अचित पंच आभासि देह। रस दुग्ध सची षुडा अछेह ॥ २३९ ॥
के भषें वाय के ध्यान देव। जल दूध कंद फलह सु केव ॥

छं० ॥ २४० ॥ रू० ११८ ॥

गाहा ॥ कंदं फलानि फलयं। कठ्ठंतं मुनिय काल बेकालं ॥
एकोपि धार धरयं।। संतोषं सबै निधानं ॥

छं० ॥ २४१ ॥ रू० ॥ ११९ ॥

संतोषं विना न लभ्भै। कलपंतं राजनं सुष्षं ॥
जो संतोषं देहं। तौ सुषं हूय फल्ल काम लया ॥

छं० ॥ २४२ ॥ रू० ॥ १२० ॥

यक्ष। उद्दाल। क्रेय। च्यव। नह। मातंग। जेय। तहां। तया। सथ। देवरिष्य। कलिंद्र। सरसति। ऊवधी। स्रब। अधनय। अध्याय। लगे। आय। लगे। धारनाध्यान आदर। सरिष। क्रम। अध्याय। सु। वास। लिले। विसेष। जंत्र। अम्रत। दृष्षे। भषें। कंध। सकेत्र ॥

११९–१२० पाठान्तर–कठंतं। कालवेकालं। ए कोपि। संतोसं। सख्य। तिहायां ॥ ११९ ॥ संतोसन। विणा। लभइ। कल पंतं। संतोसं। तो ॥ १२० ॥

यज्ञ का अनुष्ठान सुन कर राक्षसों का एकत्र हो आना ॥

दूहा ॥ जंचकेत दानव दुसह। अरु रष्यस धुमकेत।
अप्प सथ्थ लीने सकल। आए दुष्टह हेत ॥
कं० ॥ २४३ ॥ रू० ॥ १२१ ॥

ऋषियों का अनलकुंड रचन कर ब्रह्म कर्म प्रारंभ करना ॥

कवित्त ॥ आबू करि रिषि जग्य। मंत्र कारन सु मंत्र जपु ॥
पंड हथ्थ नर उंड। अष्ट अंगुल ऊर्द्ध वपु ॥
हथ्थ तीन अरु अद्ध। मंडि चवकून समा सम ॥
स्वप्प समति सम कियौ। फननि बचयौ देव क्रम ॥
अगिनेव थान अगिनेव धर। बाय कुंड दष्षिन दिसा ॥
नैरत निवर्त धज मंडि कै। ब्रह्म क्रम्म लग्गे रिसा ॥
कं० ॥ २४४ ॥ रू० ॥ १२२ ॥

दैत्यों का ऋषियो के यज्ञ में विघ्न करना ॥

कवित्त ॥ पंच पर्व्व जग्योपवीत। पंच पव्वो अधिकारिय ॥
देवो सुनि दुजराज। वैश्य शूद्रह चितकारिय ॥
चर बिडाल पशु म्लेछ। क्रंम चंडाल षंड करि ॥
दूह प्रमान दस विधि * सुक्रम। जग्ग मंडे सुमंडि हरि ॥
दानव सु दुष्ट दुष्टंसु क्रम। दुष्ट म्लेच्छ वरिषा करै ॥
पसु मंस रुधिर नंषै सु जल। क्रंम विप्र संमुह डरै ॥
कं० ॥ २४५ ॥ रू० ॥ १२३ ॥
चौ बेदी चौ विप्र। गीत गायत्र मंत्र जप ॥
ता मंझो घन विघन। करै आरिष्ट असुर कुप ॥

---

१२१ पाठान्तर-यंत्रकेत। राषेस। धुम्रकेत। अप। सथ। अहेत ॥

१२२ पाठान्तर-आब्बू। रिष्यि। तप। हथ। वर। उरद्ध। वप। अर्द्ध। संमति। स्वप। कीयो। बंचयो। अग्गिनेव। आगे। नेत्र थांन। अगि। नेव। वाइ। क्रुंड। दषिन। क्रिसा रसा ॥

१२३ पाठान्तर-जग्योपवीत। जुग्योपवीत। सं· १६४७ और १७७० की पुस्तकों में यह पाठ है "दूह विंधि प्रमान दस विधि सुक्रंम"। जंग। जग। सुमंडि। सुदुष्ट। दुष्ट। सुक्रम्म। वसु। मंसु। सुजल। कर्म। समुह ॥ * विधि विशेष है ॥

१२४ पाठान्तर-गाइत्र। मंडय। मंडे। पर्वत हलावे। मोह्निनी। रूप कब्रहिक धरै। नट्टहिं। कबक। वे। "वे हथिन तालि न धरै" भी सं· १६४७ की में पाठ है। हथ्थें।

कबक भूमि हल्लवै । कबक पर्ब्बत हल्लावै ॥
अग्नि दृष्टि कब करै । कबक बुल्लै बुल्लावै ॥
मोहनी रूप कबहुक करै । कबक सिंघ नद्दह करै ॥
तुष्णीक रहै गावै कबहु । बे दृष्यो तालह धरै ॥
छं० ॥ २४६ ॥ रू० ॥ १२४ ॥

ऋषियों का संतापित होकर वशिष्ट के पास जाय पुकारना ॥

दूहा ॥ दिष्षि रिष्य मंडी सु रिष । जग्गिन होमह जाप ॥
ताहि बिगारन मन मुदित । लगे सकल संताप ॥
छं० ॥ २४७ ॥ रू० ॥ १२५ ॥

पद्धरी ॥ रज दृष्टि उपल चिन नंषि थान । चासुना बीर पहु लगि भयान ॥
रिष गये सब्ब वाचिष्ट पास । रष्षसन कह्यौ मंड्यौ विनास ॥ २४८ ॥
रिष राज दुष्ट बध चिंत आय । छंड्यौ जजन्न बल मंच भाय ॥
छं० ॥ २४९ ॥ रू० ॥ १२६ ॥

जिस पर वशिष्ट का प्रतिहार चालुक्य और पँवार को प्रगट करना ।

कवित्त ॥ तब सु रिष्य वाचिष्ट । कुंड रोचन रचि रचि तामह ॥
धरिय ध्यान जजि होम । मध्य बेदी सुर सामह ॥
तब प्रगट्यौ प्रतिहार । राज तिन ठौर सुधारिय ॥
फुनि प्रगट्यौ चालुक्क । ब्रह्मचारी ब्रत धारिय ॥
पांवार प्रगट्या बीर बर । कह्यौ रिष्य परमार धन ॥
चय पुरष जुद्ध कीनौ अतुल । मह रष्षस षुट्टंत तन ॥
छं० ॥ २५० ॥ रू० ॥ १२७ ॥

१२५ पाठान्तर-दिष्षि दिष्षि । दिषि दिषि । दिषि । दिषि । लग्गे । संत्ताप । मंताप ॥
१२६ पाठान्तर-लग्गि । यान । सब । सर्ब । राष्यसन । राषिसन । वध । चिंति । जजन । बलं ॥
१२७ पाठान्तर-रिषि । वासिष्ट । राचेता । तहिं । ध्यान । मध्यवदी । सरसा । मद्धि । प्रिगट्यौ । परिहार । राह । चालुक्र । सं· १६४७ में "ब्रह्म दिन चाल सुमारिय", सं· १८५९ की में "ब्रह्म तिन चाल सुसारिय" पाठ हैं । रष्य । रष । पंमार । घनु । धनु । रषस । तनु ॥

तथापि राक्षसों का उपद्रव शमन न होना॥

मलया॥ कारयं जग्य बंभान निंमानयं। रचियं कुंड षंडं थिरं थानयं॥
आसनं दिव्य देवान आव्हानयं। आसुरं कीन उच्चिष्ट ऊथानयं॥
छं०॥ २५१॥ रू०॥ १२८॥

तब वशिष्ट का स्वयं कुंड रचन कर यज्ञार्थ बैठना और चिंतवन करना॥

दूहा॥ जब वाच्चिष्टह जग्य कजि। रुजि कुंडह सुभ थान॥
तब आसुर अन संक से। किय उच्चिष्ट उतान॥
छं०॥ २५२॥ रू०॥ १२९॥

कवित्त॥ तब चिंतिय वाचिष्ट। एह आसुर अविचारिय॥
जग्य जीह उच्चिष्ट। करैं कातर क्रत हारिय॥
सुरन अंस संग्रहे। हवै नह हव्य हुआवह॥
सो उपाव संचियै। जो * याहि संवरै असुर सह॥
न्त्रिम्यौ सु सूर संग्राम भर। अरि अलंघ षंडन सु षल॥
सम धरहि जग्य कारन सकल। विमल सिष्ट सोभै सयल॥
छं०॥ २५३॥ रू०॥ १३०॥

अरिल्ल॥ अघट घाट रिषि दृष्षि निसाचर। परिसि च्यार धरि ध्यान ग्यान बर॥
चिंतिय ब्रह्म करम किहि कामह। भयौ रूप रिषि ब्रह्म सुतामह॥
छं०॥ २५४॥ रू०॥ १३१॥

---

१२८ इस रूपक के छंद का नाम जो चंद ने मलया प्रयोग किया है वह स्त्रग्वणी नामक चार रगण का छंद है॥

पाठान्तर-दंभाननि। मानयं। रचियं। आहवानयं। उच्चिष्ट।

१२९ पाठान्तर-वाशिष्ट। सुथांन। अनं।

१३० पाठान्तर-चितिय। जिष्ट। जिह। करैं। हवै न हव्यहु आवह। संयाम। षंड। समं। सोभे॥ (जो *) विशेष है॥

१३१ पाठान्तर-दैषि। निसाचरं। बरं। ब्रम्हकरम॥ सं० १७७० की पुस्तक में "ग्यान" शब्द नहीं है॥

वशिष्ट का चाहुवानजी के उत्पन्न करना ॥

कवित्त ॥ अनल कुंड किय अनल । सज्जि उपगार सार सुर ॥
कमलासन आसनह । मंडि जग्योपवीत जुरि ॥
चतुरानन स्तुति सद्द । मंच उच्चार सार किय ॥
सु करि कमंडल बारि । जुजित आव्हान थान दिय ॥
जा जल्लि पानि अव अहुति जजि । भजि सु दुष्ट आव्हान करि ॥
उप्पज्यौ अनल चहुवान तब । चव सु बाहु असि बाह धरि ॥
छं॰ ॥ २५५ ॥ रू॰ ॥ १३२ ॥

दूहा ॥ भुज प्रचंड चव च्यार मुष । रत्त व्रन्न तन तुंग ॥
अनल कुंड उपज्यौ अनल । आहुवान चतुरंग ॥
छं॰ ॥ २५६ ॥ रू॰ ॥ १३३ ॥

ऋषियों का चाहुवानजी का स्वरूप देख कर उन का चाहुवान कहना । उन के राक्षसों से युद्ध करने की शक्ति देने के आशापूरा देवी का स्मरण करना । देवी का प्रत्यक्ष होकर चाहुवान जी के राक्षसों से युद्ध करने में सहायता देना । राक्षसों का रसातल के जाना । देवी का चाहुवान जी के अपनी कुल देवी मानने की आज्ञा करना और उन का अपने वंश भर की कुल देवी मानना स्वीकार करना । देवी का उन को वर देकर पधारना । वशिष्ट का चाहुवान जी का आशीर्वाद देकर अन्य अनलों का वर्णन करना और दुर्वासा के शाप देकर पठाना ॥

गाथा ॥ उपज्यौ अनल अनूपम रूपं । नहि आकृत्ति अवर नर रूपं ॥
ब्रंन अभून सु उन्नन जिष्टं । वंदन भर कि बड्ड मनु पिष्टं ॥ छं॰ ॥ २५७ ॥

---

१३२ पाठान्तर–अनलकुंड सजि । मडि । जग्योपवित । आहवान । जाजल्ने । आवहान । उपज्यै । चहुआन ॥ पुरातत्त्ववेत्ताओं के स्मरण में रहे कि प्रायः यह कहा जाता है कि अग्निकुलों की कब उत्पत्ति आबू पर हुई उसका कोई पौराणिक प्रमाण भी नहीं मिलता । अतएव हम एक यह प्रमाण विदित करते हैं कि कालिंदिका प्रकाश नामक ग्रंथ में पुराणोक्त यह श्लोक लिखा है–

श्लोक ॥ दूषयिष्यन्ति यवना, स्सहस्राब्दे गते कलौ ॥
तदा रक्षां करिष्यति, याज्ञिकाः क्षत्रियर्षभाः ॥

१३३ पाठान्तर–रत । व्रन । बव ।

स्याम रोम कपोल विसालं। उन्नित कंध क्रतिय दूसालं ॥
लाल मान सोभै उर सोभं। मधु प्राक्रष्ट दिच्छ कर दोभं ॥ छं० ॥ २५८ ॥
नयन प्रथुज भ्रकुटी सु करूरं। मुख आक्रत्ति बाल हर नूरं ॥
कवच चोन उर चान सरीसं। दल आक्रत्ति भयानक दीसं ॥ छं० ॥२५९॥
तोन पूरि सर बद्धि सु कासं। धरिय पांन सरबी रबि रासं ॥
षेटक षग्ग उनंगी धारं। चाहिवान दिष्यो रिष सारं ॥ छं० ॥ २६० ॥
चाहि आइ रिषि आइ समंगे। चहुआन कहि सद सुरंगे ॥
समरी सकति रिष्षि गिर वासी। दिय साहाय युद्ध कजि तासी ॥ छं० ॥ २६१॥
आई सकति सिंघ आरोही। द्वादस भुजा सु आयुद्ध सोही ॥
षेटक षग्ग बरद्दह पासं। घंटा बान क्रती सिर आसं ॥ छं० ॥ २६२ ॥
षप्पर सकति शूल मद्द पाचं। देषे रूप कंम क्रम काचं ॥
आसा पूरि कहै रिषि राजं। चाहुवान मंडी क्रन काजं ॥ छं० ॥ २६३ ॥
चाली सकति सहाइ अनक्षं। क्ष्से सूर सबै कसि वक्षं ॥
सब आए कढि रष्षस ठानं। मंड्यौ जुद्ध सबै असमानं ॥ छं० ॥ २६४ ॥

---

१३४ इस रूपक के छंद २५७ के पाठ में बड़ा गड़बड़ है। एशियाटिक सोसाईटी बंगाल की छापी हुई पुस्तक में "उपज्यौ अनल अनूपम रूप। नहि आक्रति अवरन रूपं॥ व्रन अभूत सू उंनत जिष्टं। बंदन भर कि बद्दुम नुपिष्टं" ॥ और सं० १७७० की पुस्तक में "उपज्यौ अनल अनोपम स्तपं। महि आक्रति अवरम रूपं। व्रंत अभूत असु उत्तमा जिष्टं। बंदन भरकि बद्दु मन मिष्टं" और संवत् १७४७ की में "उपज्यौ अनल अनूपम रूपं। नहि आक्रति अवरम स्तूपं। ब्रत अबूत असु उच्चत जिष्टं। बंदन धरा के बद्दु मन पिष्टं" ॥ किन्तु हमारा पाठ कर्नैल टाड साहब के गुरु बारहट क्रष्णसिंहजी ने जिस सं० १८५९ की पुस्तक से रासो पढ़ा था उसके अनुसार है ॥ इस में 'दूपं" शब्द हमारे पाठकों को अर्थ करते समय परिश्रम देगा क्योंकि जिस संस्क्रत शब्द "दूप" का यह अपभ्रंश हिन्दी है वह संस्क्रत के अच्छे विद्वानों के पढ़ने में भी उस का बहुधा प्रयोग न होने के कारण बहुत ही कम आया होगा और वह वाचस्पत्यबृहदभिधान और शब्दार्थचिन्तामणि जैसे बड़े कोशों में भी नहीं मिलेगा परन्तु प्रोफेसर बिलसन साहब के कोश में मिलेगा। वे इसको त्रिलिंग में strong अर्थात् बलवान अथवा पुष्ट का वाचक लिखते हैं ॥

पाठान्तर-उनित। उंनित। उच्चत। दुसालं। प्राकुष्ट। दिक्ष। आक्रति। वालहर। आक्रति। सरि वीर विरासं। उनंगी। वाहि। बान। गिरवासी। वरदह०। कर्ता। क्रम। मंडो। सहाई। ढानं। आवटि। धुंमकेत। सकतिय सहतिय। अध। पास। तास। तक्ष। प्रसंनिय। यष्षे। नरम। ताम। संवत् १६४७ और संवत् १७७० की में "धास्यो कर सिर ले चहुवानं" पाठ है। धर्यो। चाहुवान। ब्रधहु। बंस। मान। चहुवान। असमान। गई। हे है। चहुवानं। उपज्जि।

बाढ़ै आवधि सकती सारं। धड आवद्दि पडै धर भारं ॥
सद्दे धुमरकेत सकतीयं। जंचकेत चहुआन सु * छतीयं ॥ छं० ॥२६५॥
अड्ड सु रष्यस दानव सद्दे ॥ गए रसातल नट्ठे अद्दे ॥
देषी आइ अनहल पासं। जंपी तष्य प्रसन्नो तासं ॥ छं० ॥ २६६ ॥
आसापूर कहै मो नामं। पुज्जै पुच पौच परिनामं ॥
कुलह गोच भुम्भ थप्पै नामं। अप्पों रिद्धि अचलह तामं ॥ छं० ॥२६७।
धाल्यौ सिर लै कर चहुवानं। ब्रह्मतु बंस अंस जस मानं ॥
जीती अप्प देवी चहुवानं। दिय वर दान गई असमानं ॥ छं० ॥२६८॥
गइ असमान कियौ सद भारी। धुं! धुं! कार जै! जया सारी ॥
है! है! करि हं! हं! चहुवानं। अनल कुंड उपजे परिमानं ॥ छं०॥२६९॥
चौ मुष्यौ चौ वेद प्रकारं। ऐसो मुष देष्यौ अधिकारं ॥
वेदं स्याम अथर्बन रूपं। रिगु जिजु वेद देव गुन नूपं ॥छं० । २७० ॥
चित चमकार चिहूं दिसि लग्गिय। पढत ताहि ब्रह्मंड सु जग्गिय ॥
बानी धुनि मुनि चरषि वसीसं। वर बचिष्ट तहां दई असीसं ॥छं० ॥२७१॥
तोहि बंस होइ कुंडल धारी। जनु कि अर्क राका विस्तारी ॥
थुति करि सेव देव तिहि पानं। जै जै तप्प जिते चहुवानं छं० ॥२७२॥
परिहरि वीर बीर नर केकं। तिहि चालुक्क भयौ गुन मेकं ॥
परह्नरि वर पावार ति वारं। क्रोध रूप जाज्वल्य निधारं ॥ छं० ॥२७३॥
जाजुल्लति परिहार न दिष्यो। षिजि करि विप्र पौरि मह रष्यौ ॥
तिन कारन वाचिष्ट रिषीसं। अबुद नाम गिरि नंद जगीसं ॥ छं॥ २७४ ॥
ता ऊपर दुरवासा आए। दै सराप वाचिष्ट पठाए ॥
अब वे दानव दुष्ट सु दावैं। तो रष्या चव कुली सु राषै ॥ छं० ॥२७५॥
बंस छतीस गनीजै भारी। च्यार कुली कुल तिन अधिकारी ॥
सब सु जात जोनी मग दिष्षिय ए ब्रह्मा अविसेष विसिष्षिय ॥

॥ छं० ॥ २७६ ॥ रू० ॥ १३४ ॥

चिहू। पढ्य। हरषिव। सीसं। वशिष्ट। रासा। तप। नरकेकं। तिवारं। पारहारन। तहं। उपर। रष्य। छत्तीस। गति। जे। जेत्ती। (सु *) विशेष है ॥

छत्रियों के छत्तीस बंशों की नामावली ॥

कवित्त ॥ रवि ससि जादव बंस । ककुस्थ परमार सदावर ॥
चाहुवान चालुक्क । छंद सिलार आभीयर ॥
दोय मत्त मकवांन । गरुअ गोहिल गोहिल पुत ॥
चापोत्कट परिहार । राव राठौर रोस जुत ॥
देवरा टांक सैंधव अनिग । योतिक प्रतिहार दधिषट ॥
कारट्टपाल कोटपाल हुल । हरितट गोर कलाव मट ॥
छं० ॥ २७७ ॥ रू० ॥ १३५ ॥

दूहा ॥ धन्यपालक निकुंभ वर । राजपाल कविनीस ॥
काल कुरक्कैं आदि दै । बरने वंस छतीस ॥
छं० ॥ २७८ ॥ रू० ॥ १३६ ॥

चारों अग्निकुल छत्रियों ने वशिष्ट का यज्ञ निर्विघ्न किया ॥

कवित्त ॥ पढन मंच रिष जाप । च्यार षिची उप्पाए ॥
कुचिल दीन परिहार । पैारि रष्हु सत भाए ॥

१३५-३६ पाठान्तर-यादव । परमार-रु । तोंबर । चालुक । छिंद । छंदक । आभीवर । गुरुअ गोह । गही भुत । राठोर । सिंधव । अनग । अनंग । योतिक । प्रतिहा । दधीषट । करेटपाल । हुन । हरीतट । गोरक । भाड । जट ॥ १३५ ॥ ध्यानपालक । ध्यान पालकनि । कुंभ । कविनीस । दे । छत्तीस ॥

कवि चंद के समय में जो छत्तीस कुल क्षत्रियों के प्रसिद्ध थे उनके नाम उसने वर्णन किये हैं अर्थात् रवि-सूर्यवंशी १ससि=चंद्रवंशी २ जादव=यदुवंशी ३ ककुस्थ=कछवाहे ४ परमार ५ सदावर=तोंबर ६ चोहान ७ चलुक=सोलंकी ८ छंद=रांदेल ९ सिलार १० आभीयर ११ दोयमत्त=दाहिमा १२ मकवानं १३ गोहिल १४ गहिलोत १५ चापोत्कट=चावडा १६ परिहार=पढियार १७ राठैार १८ देवडा १९ टांक २० सैंधव=सिंधव २१ अनिग=अनग २२ योतिक २३ प्रतिहार २४ दधिषट २५ कारट्टपाल=काठी २६ कोटपाल २७ हुल=हुन, हुण २८ हरितट=हाडा २९ गोर=गोड ३० कमाष=कमाड, जेठपा ३१ मट=जट ३२ ध्यानपालक वा धान्यपालक ४३ निकुंभ ३४ राजपाल ३५ कलकुरक्कैं=कालछर ३६ । इन के विषय में कवि दलपत रामजी अपने जाति निबंध नामक ग्रंथ में लिखते हैं कि रत्नकोश नामक संस्कृत ग्रंथ की टीका में लिखा है कि क्षत्रिय कुल का आदि पुरुष मनु उसके वंश में से ये छत्तीस हुए हैं ॥

सं० १६४७ और सं० १७७० की पुस्तकों में इन रूपकों के स्थान में रूपक १३७ और उस के स्थान में इन को लिखा है अर्थात् उलट पुलट हैं । हम ने उनका क्रम इस लिये ग्रहण नहीं किया है कि रूपक १३४ के छंद २७६ की पहिली तुक का अर्थ उसके पीछे इन रूपकों का ही होना प्रकाश करता है ॥

चतुर बीर चहुवान । च्यार मुष्यौ चैावाहं ॥
अष्ट अग्र आरिष्ट । देव चारिष्ट सु साहं ॥
पंमार वाह धन धन करह । कह्यौ रिष्य परमार धन ॥
चालुक्क वाह चालुक्क दुज । कुसिन कुसन मंडित तन ॥
छं० ॥ २७९ ॥ रू० ॥ १३७ ॥

अनल कुंड आभंग । उपजि चैाहान अनिल थल ॥
सुकर संठि करि वार । धनुष संग्रह्यौ बान बल ॥
तिन रष्षिस परिवार । धार सुष धरनि नि घट्टिय ॥
षल जुषित्त संमुहे । तिनह सिर सरअन तुट्टिय ॥
बंभान जग्य निर विघन किय । पुहप वृष्टि सुर सीस रजि ॥
रष्षि सु धरनि षग भुज्ज वर । रिष्ट निवारिय दुष्ट भजि ॥
छं० ॥ २८० ॥ रू० ॥ १३८ ॥

जिन्होंने द्विजों की रक्षा की उनके वंश में पृथ्वीराज हैं ॥

दूहा ॥ तिन रक्षा कीनी सु दुज । तिहि सु वंस प्रथिराज ॥
सो सिरषत पर वादनह । किय रासो जुबिराज ॥
छं० ॥ २८१ ॥ रू० ॥ १३९ ॥

चाहूवानजी के वंश के राजाओं की कथा ॥

चाहूवानजी से माणिकराजजी पहिले तक तेरह पीढ़ी का वर्णन ॥

पद्धरी ॥ ब्रह्मान जग्य उतपन्न सूर । चहुवान अनल अरि मुलन सूर ॥
उत्तंग अंग प्रचंड बाह । पहुमीस इंद अरि गिलन राह ॥ छं० ॥ २८२ ॥
प्रतिपाल धरनि अंगह सु भ्रम्म । श्रुत मान कीन उत्तंग क्रम्म ॥
रत्तो सु जोग भव भोग रास । पुर अमर नाग नर कित्ति जास ॥ छं० ॥ २८३ ॥

१३७-१३८ पाठान्तर-जाय कुलिल । चहुवान । मुषो । सुसाहं । वाह । रिषि । पंमार । मंडि । ततन ॥ १३७ ॥ कुंद । चोहांन । रष्षि । सपरिवार । मुष । निघट्टिय । जुषित । निरविघन । भुज्जवर ॥ १३८ ॥

१३९ पाठान्तर-रख्या । तिहिं । पृथ्वीराज । पृथिराज । प्रवादनह ॥

१४० पाठान्तर-ब्रंह्मान । उत्पन्न । चहुवांन । मल । मसूर । उतंग । पहुबीसु । इंद्र अरिगिलन । धरनी । अंग । श्रुतमान । उतंग । रतो । सुजोग । भास । किति । तासू । अन । सु । अन । माहंत । संका । विडार । मानिक । राजत । सु । अन । माह । भूत । भयंकर । रत ।

ता सुअन सूर सामंतदेव । अरिमंन मत्त मत्ता जु रेव ॥
महदेव सुअन मोहंत तास । सु प्रसन्न ईस सेवंत जास ॥ छं० ॥ २८४॥
बर अजयसिंह सिंघह सु राम । नर बीरसिंह संग्राम नाम ॥
सुअ बिंदसूर उदारहार । आसोक अीय संकाविडार॥ छं० ॥ २८५ ॥
सुअ वैरसिंघ वैरी त्रिहंड । अुध बीरसिंघ अरि बीर डंड ॥
अरिमंत सकल कलि कलन सूर । मानिक्क राव चहुआन सूर॥ छं० ॥२८६॥

महिसिंहजी से धम्मधिराजजी तक का वर्णन ॥

राजत्त * सुअन ता सहस मध्य । महसिंघ सिंघ संग्रम पथ्य * ॥
सुअ चंद्रगुपत सम चंद्ररूप । प्रतापसिंघ आरेन दूप ॥ छं० ॥ २८७ ॥

नृप । तत । पूर । बालन । प्रथम । जग्ग । दुब । पहु । मंह । रत । कोडी । कियो । चल्यैा । प्रमान । मांन । थांन । चल्यैा । मुकजो । तुकयैा । निगम । मुक्कयो । जित । कित्ति । चैासठि । चित । पायो । जंम । बिष । जंम । कदंम । कदम । दानेवसल । थांन । स । आनि । उग्गत । उगात । उतंग । पुकस्या । जम्न जाहुजाहु । जाह जाह । इन्द । सं० १७७० और १६४७ में "नेर पुर रुद्र डरि हक बजि । मांनि । जज्जंरी । जज्जरीय । पांनि । लगे । डक्के । सुरूप । मृग । सर्प । अ्रय । अ्रप । सद । पुज॥

* * पक्षपात रहित वृद्ध और विद्वान कवि कहते हैं कि यहां अर्थात् छंद २८६ और २८७ के बीच में कितनेक छंद लोप हो गये है किन्तु चंद कवि ने तो मूल पुरुष श्री चाहुवानजी से लेकर पृथ्वीराजजी तक पीढ़ावली वर्णन की थी जिनको सब ऐतिहासिक ग्रंथ और सर्वसाधारण मनुष्य हिन्दुओं का अंतिम बादशाह होना प्रकाश करते और मानते हैं। और क्वचित् चंद का नाम विध्वंस करनेवाले यह कहते हैं कि ग्रंथकर्त्ता ने अपने अज्ञात होने के कारण खंड विखंड वंशावली वर्णन की है। इन दोनों सम्मतियों में से हम पहिली से सम्मत हैं क्योंकि प्रथम तो चंद कवि अपने वंश परंपरा से इस राजकुल का मुख्य कवि और ख्यात वर्णन करनेवाला था और यह कदापि संभव नहीं है कि आज तो हम चोहान वंश की शुद्ध अथवा अशुद्ध पीढ़ावली जान सकें और हम से सात सो वर्ष पहिले जो उक्त राजकुल का निज कवि हुआ वह न जानता हो और न वर्णन करै। दूसरे चाहुवान वंश की पीढ़ावली जो श्रीमान श्री बूंदी राव राजाजी महोदय ने निश्चय कराया है और जो एक चाहुवान वंश मात्र की पीढ़वली हम भी सन् १८७३ से सिद्ध कर रहे हैं और वह बूंदीवाली से विशेषांश में मिलती हुई है। उन दोनों के अनुसार श्री चाहुवानजी से पृथ्वीराजजी एक सो सतत्तरवीं १७७ पीढ़ी में हुए सिद्ध होते हैं। अब यहां सूक्ष्म बुद्धि से विचार कर देखने की बात है कि छंद २८२ से २८६ तक में जो तेरह १३ नाम क्रम से कवि ने कहे हैं वे उक्त दोनों वंशावलियों से बराबर मिलते हैं और "राजत्त सुअन ता सहस मध्य" का अर्थ इन प्रथम माणिक्यराजजी के विषय में घट नहीं सकता क्योंकि इतना वंश यहां तक बढ़ नहीं सकता। इस के सिवाय जो पाठक चाहुवान वंश की इस परम प्रसिद्ध कथा को जानते होंगे कि तीसरी पीढ़ी में महादेवजी (जिनका उपनाम परभंजनजी भी है) के हाथ से अनजाने प्रमति ऋषि की एक गाय मर गई थी कि जिस पर ऋषि ने शाप दिया था कि "तुमारा वंश नाश हो" तदनन्तर ऋषि को

सुत मोह सिंघ बर मोह रूप । भूतह भयंक रन रत्त भूप ।
सुत सेनराइ वह सेन वंत । संप्रत्ति राइ सुभ तत्त मंत ॥ छं० ॥ २८८ ॥
सुअ नागहस्त सम नाग राज । अस्थूल नंद आनंद राज ॥
गिर लोहधीर सुत भ्रम्मसार । सुअ बीरसिंघ संकाबिडार ॥ छं० ॥ २८९ ॥
सुअ बिबुधसिंघ सम जोगसूर । जस चंदराय बर अजस दूर ॥
सुत किस्नराज जस किस्न चिंत । हरहरहराइ नर बुद्धिमंत ॥ छं० ॥ २९० ॥
बालन्न राइ बलि अंग तास । सुअ प्रथव राइ पहुमी प्रकास ॥
तिन अनुज अंग राजत अनेय । कलि अलप आउ कित्ती अछेय ॥ छं० २९१ ॥
धर्माधिराज रति जोग भोग । षट षुंट षित्ति षग्गह सु भोग ॥

मनाने पर उन्होंने अपराध क्षमा कर के कहा कि कितनीक पीढ़ियों तक तो तुम्हारे वंश में एक एक ही पुत्र होता रहैगा फिर वंश बढ़ैगा । इस से भी इस तुक का अर्थ माणिकराजजी में नहीं घट सकता ।

तथा उक्त दोनों पीढ़ावलियों को इस रूपक के साथ मिलाने से यह भी ज्ञात होता है कि छंद २८७ से अर्थात् उस में कहे महिसिंहजी एक सो अड़तालीसवीं पीढ़ी में हुए और उन से फिर सब नाम बराबर क्रम से एक सो सतत्तरवें पृथ्वीराजजी तक मिलते हैं । क्या अब जो चैादहवीं पीढ़ी से एक सो सैंतालीसवीं पीढ़ी तक के बीच के नाम वह भी क्रम से चंद कवि बिलकुल ही नहीं जानता था अथवा क्या वह उनको निगल कर परलोक में जा बैठा है ? जो कि हमारी वृत्ति सदैव प्रत्येक विषय के अनुकूल अनुमान करने और उस के साधर्म्य को मान्य करने की है इसलिये प्रतिकूल अनुमान ही क्यों करें और वैधर्म्य की ओर क्यों दृष्टि डालें । क्योंकि जो आज विद्वान लोग अन्य बड़े बड़े प्रसिद्ध ग्रंथों के विषय में ऐसे ही प्रतिकूल ही अनुमान करने लग जावें और वैधर्म्य का ही आश्रय कर लें तो बडा अनर्थ हो जाय । अब हम चैादहवीं पीढ़ी से एक सो सैंतालीसवीं पीढ़ी तक के नाम अपने तथा बूंदी राज्य के शोध किए हुए हमारे पाठकों के जानने के लिये यहां लिखते हैं । पुष्करजी (विजयपालजी) १४ असमंजसजी १५ प्रेमपूरजी १६ भानुराजजी १७ मानसिंहजी १८ हनुमानजी (धर्म्मपाल) १९ चित्रसेनजी २० शंभुजी २१ महासेनजी) चट्ठीशजी) २२ सुरथजी २४ रुद्रदत्तजी (कर्णपालजी) २४ हेमरथजी (रोमपालजी २५ चित्रांगदजी २६ चंद्रसेनजी (चित्ररथजी) २७ वाल्मीकजी (वत्सराजजी) २८ धृष्टद्युम्नजी (वरुणजी) २९ उत्तमजी ३० सुनोकजी ३१ सुबाहुजी (मोहनजी) ३२ सुरथजी ३३ भरथजी (मदसेनजी) ३४ सत्यकीजी (सात्यकजी और सत्विकजी) ३५ शत्रुजितजी (केसरीदेवजी) ३६ विक्रमजी ३७ सहदेवजी (इन को जीतकर कुरुवंशी राजा ने दिल्ली ले ली) ३८ बीरदेवजी (भीमसेनजी) ३९ वसुदेवजी ४० वासुदेवजी ४१ रणधीरजी ४२ शत्रुघ्नजी ४३ सुमेरुजी (शालिवाहनजी)४४ कृतवर्म्माजी ४५ सुवर्म्माजी ४६ दिव्यवर्म्माजी ४७ यैाबनाश्वजी ४८ हरियश्वजी ४९ अजैपालजी (अजमेर बसानेवाले) ५० भठदलनजी ५१ अनंगराजजी ५२ भीमजी ५३ गोगाजी ५४ शुभकरणजी ५५ उदयकरणजी ५६ जशकरणजी ५७ हरीकरणजी ५८ कीर्तीशजी ५९ बालकृष्णजी ६० हरिकृष्णजी

वीसल देव जी का वर्णन ॥

जग दुष्ष वीसल नरिंद । बहु पापरत्त द्रव्यान अंध ॥ छं० ॥ २९२ ॥
क्रत अकित काम कित्तह सु कीन । जिन असुर घोर षनि द्रव्य लीन ॥
संसार थागि फुनि द्रव्य काज । उपजाइ मत्ति अजमेर राज ॥ छं० ॥ २९३ ॥
कैाडी सु मोल गज कियैा एक । लीयो न किनह फिरि सहर नेक ॥
कामंध अंध सुझ्झौ न काल । इक अहक ब्रोरि गिरि इक्क माल ॥ छं० ॥ २९४ ॥
चल्ल्यौ न राजनीतह प्रमान । आनीत बंधि न्वप थान थान ॥
सुझ्झौ न ध्रम्म चाल्यौ प्रमान । मुकजौ निगम्म करि अगममान ॥ छं० ॥ २९५ ॥
अबलोह छोह छंडिय सु कित्ति । मुक्कयौ ध्रम्म आधम्म जित्ति ॥
दरबार अतिथ दीसै न कोइ । अप्प सुह कित्ति संभरै लोइ ॥ छं० ॥ २९६ ॥
चैासट्ठि बरस बर राज कीन । पायै न पुच फल सुष्प हीन ॥
बल अबल चित्त चिंत्यौ सुकाल । पायो न सुक्रत कछु करन साल ॥ छं० ॥ २९७ ॥
गति अंत सुमति सो छोड़ बीर । पावै सु जन्म जज्जर सरीर ॥
द्रवि गयैा सुरुन वीसल नरिंद । उप्पनैा बीर क्लिनि वीष्य कंद ॥ छं० ॥ २९८ ॥
घन मदन सदन भरि स्त्रब्ब जन्म । तिह परन उट्ठि क्रत्या कदम्म ॥

---

६१ रामकृष्णजी ६२ बलदेवजी ६३ हरदेवजी ६४ भीमजी ६५ सहदेवजी ६६ रामदेवजी ६७ वसुदेवजी ६८ श्यामदेवजी ६९ हरिदासजी ७० महीधरजी ७१ वामदेवजी ७२ श्रीधरजी ७३ गंगाधरजी ७४ महादेवजी ७५ शारंगधरजी ७६ मानसिंहजी ७७ चक्रधरजी ७८ शत्रुजितजी ७९ हलधरजी ८० महाधनुजी ८१ देवदत्तजी ८२ दामोदरजी ८३ काशीनाथजी ८४ लीलाधरजी ८५ धरणी धरजी ८६ रमणेशजी ८७ भगवतदासजी ८८ कृष्णदासजी ८९ शिवदासजी ९० हरिपूर्णजी ९१ देवीदासजी ९२ कर्मचंद्रजी ९३ रामदासजी ९४ महानन्दजी ९५ विष्णुदासजी ९६ महारामजी ९७ रेवादासजी ९८ अमरसिंहजी ९९ गंगादासजी १०० मानसिंहजी १०१ विश्वंभरजी १०२ मथुरादासजी १०३ द्वारिकादासजी १०४ माधवजी १०५ सुदासजी १०६ वीरभद्रजी १०७ गोपालजी १०८ गोविन्ददासजी १०९ माणिक्यराजजी दूसरे (इन के दे पुत्र बड़े हनुमानजी और छोटे सुग्रीवजी जिन में से पाटवी हनुमानजी सांभर का राज्य अपनी प्रसन्नता से सुग्रीवजी को देकर आप पटना जीत वहां के राजा हुए कि जिन के वंश में इकतीस ३१ प्रकार के पूर्विये चैाहान हुए) ११० सुग्रीवजी (सांभर के राजा हुए) १११ अंगदजी ११२ केसरीजी ११३ जयंतजी ११४ जगदीशजी ११५ जयरामजी ११६ विजयरामजी ११७ कृष्णजी ११८ जीतयुद्धजी ११९ गोवर्द्धनजी १२० मोहनजी १२१ गिरिधरजी १२२ उदयरामजी (उद्यमजी) १२३ भारथजी १२४ अर्जुनजी १२५ शत्रुजीतजी १२६ सोमदत्तजी १२७ दुःखंतजी १२८ भीमजी १२९ लक्ष्मणजी १३० परशुरामजी १३१ रघुरामजी (मारोट के राजा से सात दिन लड़कर सांभर छोड़ बुरहानपुर अपने सुसरे के यहां भाग गए और वहीं मरे) १३२ समरसिंहजी १३३ माणिक्यराजजी तीसरे (सांभर इन्हें ने पीछे विजय कर लिया १३४ भहुकर्मजी

ढुंढा दानव की उत्पत्ति और उसका अजमेर के बन में रहना ॥

कत्या कद्रम्म उर असुर रज्जि । धर ढुंढ नाम दानव उपज्जि ॥छं०॥२९९॥
जगि जोग नयर जुगनीय थान । पुज्जै सु आय उग्गति विहान ॥
रथ च्यार चक्र उत्तंग बाह । असि असिय हथ्थ मुष अग्ग दाह ॥ छं०॥३००॥
संभरिय धरा धरनीय ठाह । पुक्कर्यौ नरनि रे जाहु जाह ॥
सिर कोपि रीस धुनि दसन बज्जि । उभरे षग्ग जनु इन्द्र गज्जि॥छं०॥३०१॥
प्राहार पाय धुकि धरनि धुज्जि । पुर नयर रुद्र उर चक्कि बज्जि ॥
कंपी सु भूमि नव षंड मान । जज्जरिय नाव ज्यौं बाय पान ॥ छं० ॥३०२॥
लग्गै न पलक द्रग देव चक्खि । डक्कै डकार द्रगपाल गक्खि ॥
दिष्षौ सरूप दानव उतंग । वैराट रूप हरि धर्यौ अंग ॥ छं० ॥ ३०३॥
पंषीरू स्वग्ग नर स्वप्प भाजि । आघात सद्द दानव सु गाजि ॥
चित चिंत चिंत्त जुग्गिनि प्रधान । पुज्जै सु आनि उग्गति विहान ॥छं०॥३०४॥
चहुआन रूप दानव प्रमान । भज्या सु पुच आबू सथान ॥
छं० ॥३० ॥ रू० ॥ १४०॥

(दामोदरजी) १३५ रामचंद्रजी १३६ संग्रामसिंहजी १३७ शिवदत्तजी (श्यामदत्तजी) १३८ भोगादत्तजी १३९ शिवदत्तजी १४० रुद्रदत्तजी १४१ ईश्वरजी १४२ उमादत्तजी १४३ चतुरजी १४४ सोमेश्वरजी पहिले (इन के दो लड़के भरथजी १ और उरथजी २ उन में से भरथजी पांटवी के वंश में पृथ्वराजजी हुवे और उरथजी के वंश में बूंदी और कोटा आदि के हाड़ा चौहान हुए हैं) १४५ भरथजी १४६ युद्दिष्ठजी ॥

इसके छन्द २८८ की पहिली तुक के पहिले पाद "सुत मोहसिंह बर मोह रूप ।" में कवि का गूढ आशय यह समझना आवश्यक है कि वह उसमें तीन नाम वर्णन करता है मोहसिंह (सिंहदेवजी) सिंहवर और मोहनरूप कि जिसके सिंघ शब्द को अर्थ करने के समय मोह शब्द के साथ और बर के साथ दोबार लगाने से पृथक दो नाम सिद्ध हो जाते हैं अतएव हमने सिंघ शब्द के नीचे दो लकीर करी हैं। और इसी तरह छन्द २९१ की पहिली तुक के दूसरे पाद में "प्रथम" शब्द से पृथ्वीराज नाम का निःसन्देह ग्रहण षट् भाषा में व्युत्पन्न विद्वान कर सकते । तदनन्तर वीसलदेवजी के जो वृत्त चंद ने जैसे के तैसे उत्तापित होकर लिखे हैं उनको मनन करने से विद्वान पाठक सहज ही में यह अनुमान कर सकते हैं कि यद्यपि चंद उनके कुल का वंश परंपरा से राज-कवि था पर वह निःसंदेह बड़ा ही स्पष्ट-वक्ता और पक्षपात रहित पुरुष था क्योंकि आज इस उन्नीसवीं शताब्दी में भी जब कि स्वतंत्रता और सभ्यता का सूर्य पूर्ण प्रकाशित होरहा है तब भी कोई राज-कवि ऐसा स्पष्ट-वक्ता और पक्षपात रहित अपने यजमान की दुर्गतियों को उसके भावी संतानो के शिक्षणार्थ निडर होकर प्रकाश करनेवाला प्रायः किसी की दृष्टि न आया होगा । इस के साथ भाषाओं के शोध करनेवाले विद्वानों को चंद

दूहा ॥ सो दानव अजमेर बन। रचि तत्त दिन घन अंत ॥
सून्य दिसान न जीव कौ। थिर थावर द्रिगमंत ॥
छं० ॥ ३०६ ॥ रू० ॥ १ २॥

मुरिल्ल ॥ संभरि सोर नरिंदह संभरि। पंथ प्रजा पसरै रन जंगर ॥
रम्य अरम्य करी सु धरन्निय। रहे मठ कोट अफोट करन्निय ॥
छं० ॥ ३०७ ॥ रू० ॥ १४२ ॥

सारंगदेवजी की राणी गौरीजी का अनलगर्भ सहित रणथंभ पधारना ॥

दूहा ॥ गौरां चलि रनथंभ गिरि। सारंग सत्ती राह ॥
प्रजा पुलंदी मद्दिम भरि। ग्रभ्भ अनल गौराह ॥
छं० ॥ ३०८ ॥ रू० ॥१४३॥

अनल ग्रभ्भ धरि गौरि सिसु। गय रनथंभ दिसान ॥
राजद्दव रावत पती। मातुल पष चहुवान ॥
॥ छं० ॥ ३०९ ॥ रू० ॥ १४४ ॥

का यह वाक्यखंड "हक अहक" भी ध्यान देकर समझने योग्य है कि "हक" अथवा "हक्क" जो हिन्दी भाषा में प्रयोग होता है वह अरबी अथवा फारसी नहीं है किन्तु संस्कृत **स्वक** शब्द से है और "अहक" शब्द स्वतः इस बात की स्पष्ट साक्षी देता है। इसी रूपक के छन्द ९९९ से ढुंढा राक्षस की उत्पत्ति चंद कवि वर्णन करता है ॥

१४१ पाठान्तर-रहितह। रहतह। दिसानन। जीवक्यै। द्रिग। मंत ॥
१४२ पाठान्तर-सैसरी। अवविय। रहै ॥
१४३-१४४ पाठान्तर-सारंग। ग्रभ। गौरास। शुभ। रिनथंभ। राजदव। पति ॥

इन रूपकों के पढ़ने के पहिले हमारे पाठकों को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि बीसलदेवजी ने अपने लड़के सारंग देव जी को अपने हाथ से मार डाला था कि जिस के पीछे वे आप भी सांप के काटने से मर गये और अजमेर अर्थात् संभर का राज्य बिना राजा के रह गया और अजमेर के बन में ढुंढा नामक दानव रहने लगा किन्तु बीसलदेवजी के लड़के सारंगदेवजी की रानी गौरी के गर्भ था। रानी जी राज्य की यह दशा देखकर अपने पिता रणथंभ के राजा के यहां चली गई और वहां सारंगदेवजी के अनल अर्थात् आना राजा उत्पन्न हुए। यह सब कथा आगे के रूपकों में जब आना राजा अपनी माता से अपने पिता का नाम और सब वृत्तान्त पूछेंगे तब कवि माता और पुत्र के संवाद में बीसलदेवजी की कथा सविस्तर वर्णन करेगा। इन रूपकों में अभी गौरी रानीजी का सगर्भा रणथंभ जाना ही कवि ने वर्णन किया है ॥

आना राजा का जन्म होना और उन का बालपन ॥

भुजंगी ॥ धरै गौर जन्नंम आनल्ल राजं । बसे देव गामं दुनी क्रच लाजं ॥
नवं हृत्त नित्तं नवं हृत्त सिष्षै । नरं तार तारं नत्रं भ्रत्त भिष्षै ॥ छं० ॥३१०॥
चरं संभरी बात पुच्छंत मित्तं । धरै ध्यान दिष्षै अजम्मेर चित्तं ॥
कला स्रब्ब सिष्षिं महा मल्लवीरं । गिनै मग्ग ओमं पढै मंच धीरं ॥छं०॥३११॥
दिनं सीह अब्बीह आषेट षिल्लै । ननं नेह निद्रा सुरं सिद्ध मिल्लै ॥
करं पाइकं बिद्ध साइक्क नष्षै । भरं भै अभैनं सुयं सब्ब रष्षै ॥ छं॥ ३१२॥
वधै काम कामं अलीहो न भष्षै । सुभै राजसं तामसं सत्त चष्षै ॥
रमै जम्म सेना ग्रहै जम्म भारी । सुई संभरी वात दिष्षै करारी॥छं०॥३१३॥
कहै काल कालं अकालंति बंधै । इतं जोर मा वित्त सैां चित्त संधै ॥
दुअं बाह परचंड दुग्गं सरूपं । इसो दिष्षियै राज आना अनूपं ॥
छं० ॥ ३१४ ॥रू० ॥ १४५ ॥

कवित्त ॥ अति बल बंड प्रचंड । हिंड आषेटक षिल्लै ॥
हिरन रोज वाराह । बंधि बागुर वर मिल्लै ॥
बन परवत्त झिरना । निवान राइ* राजन संग हिंडै ॥
राग रंग भाषा* कव्वित्त । दिव्य वानी चित मंडै ॥
हय हत्थि देय संकै न मन । षग्ग मग्ग पूनी वहै ॥
चहुआन वंस अवतंस इम । रँग अनेक आना रहै ॥
छं० ॥ ३१५ ॥ रू० ॥ १४६ ॥

---

१४५ पाठान्तर–आनल । वृत । नितं । वृत । भत । बान । पुछंत । सतं । चितं । स्रब । सिषिं । सिषं । महामल्ल । गिनी मंगि आमं । ओमं । अवीह । सिद्दं । पायकं । साइकं । नंष्षै । भरंभे । अभैन सोई सब्ब रष्षै । भरं भेय भैनं सोई सब्ब रष्षै । भरं भेअ भैनं सोयं सब्ब रष्षै । वधे । अली । होन । सत्तं । चषै । जम । ग्रहे । जम । सोई । साई । सोइ । संभरि । तिवंधे । जो । रमावित्त । सों । दुर्गा । द्रिंषियै । अनूप ॥
- इस रूपक से कवि ने आना राजा के जन्मादि की कथा वर्णन करनी प्रारंभ की है ॥
१४६ पाठान्तर–राइ । संग । हिंडै । कवितं । संषै । रंग । राइ * भाषा * विशेष हैं ॥

आना का बालापन व्यतीत होना और वीरत्व को प्राप्त हो माता से पूछना ॥

दूहा ॥ तन मंडी मद्दि अप्पनी । छंडी बालक बुद्धि ॥
रोस रम्यौ अरि अंग में । तब पुच्छि मातह सुद्धि ॥
छं० ॥ ३१६ ॥ रू० ॥ १४७ ॥

आना की माता का उसको सर तर और अष्षर विद्या का उपदेश करना ॥

गाहा ॥ सर तर अष्षर विद्या । सा विद्या अन्य सारसी नथ्थी ॥
सो आना अन भंगं । मंचनं प्रिय यो सष्षि ॥
छं० ॥ ३१७ ॥ रू० ॥ १४८ ॥
जा सिसु वीरं पत्तनी । बीरं होइ बीर भज्जायं ॥
नवं तीन वत्त तरंगं । सा माखं वीरया पुत्तं ॥
छं० ॥ ३१८ ॥ रू० ॥ १४९ ॥

आना का माता से पूछना कि मैं किस वंश में उत्पन्न हुआ हूं ॥

दूहा ॥ बीर पुत्त मातुल सुमति । गवरि सपन्नो जाइ ॥
के किहि बंसहि ऊपज्यौ । तूं मुझ जंपहि माइ ॥
छं० ॥ ३१९ ॥ रू० ॥ १५० ॥

गौरी माता का कहना कि यह बात न पूछो उसकें कहते मुझे भय और करुणा होती है ॥

दूहा ॥ गौरि मात कहै पुत्र सौं । पुत्त न पुव्वछहु बत्त ॥
जिहि भय जल लोचन भरहि । बर पूछन पर तत्त ॥
छं० ॥ ३२० ॥ रू० ॥ १५१ ॥

---

१४७ पाठान्तर–मत । मही । वुधि । पुछिय ।

१४८–१४९ पाठान्तर–अरकर । मंचनं । अनभंग । साखे ॥ १४९ ॥ वीर । भजाइं ॥ नवती नवत तरंगं । नव तीन वत्त तरंगं । नवती नव तत रंगं ॥ यह तीन प्रकार के पदच्छेद कोई कोई कवि करते हैं ॥

१५० पाठान्तर–पुत्ति । संपन्नो । जाई । जाइं । किहिं । ऊपनो । मांइ । भाइ ॥

१५१ पाठान्तर–गौरी । सो । पुत । पुछहु । जिन । भरहिं । पूछत । परतत ।

आना का माता से अपने वंश की कथा हठ करके पूछना ॥

पद्धरी ॥ उच्चरयौ मात सों पुच्छ सच्चि । जानों न बंस मो पिता बच्चि ॥
मो तात नाम बंदी न लेहि । नन करीं आइ कबहू न गेह ॥छं०॥३२१॥
अप्पौं न अंब अंजुलिय तात । उप्पनौ वेद हूं किन सु गात ॥
के नाम लेय मातुलह बंस । पित बैर लेउं बर बीर हंस ॥छं०॥३२२॥
छंडों कि प्रान मुक्कूं व देह । संसार भार अप्पौं कि छेह ॥
आना नरिंद यह कहिय बात । सुनि श्रवण अप्प धर परिय मात ॥
छं० ॥ ३२३ ॥ रू० ॥ १५२ ॥

आना की माता का उसे कथा प्रगट न करने को कहना और ढँक करके संक्षेप में कहना ॥

दूहा ॥ पुत्र प्रगट्ट न कीजिये । मो तिय इय अंदेह ॥
आदि हुते दानव प्रबल । धर धुंमी असुरेह ॥
छं० ॥ ३२४ ॥ रू० ॥ १५३ ॥

भिरन कहन दानव सरिस । मानव मनुषी देह ॥
मो गंधारि निहारि मुष । पुच्छ बिलासनि गेह ॥
छं० ॥ ३२५ ॥ रू० ॥ १५४ ॥

अरिल्ल ॥ इह मातुल बंस प्रधानह मान । भये दम पुत्त सु मानिक थान ॥
विचारि कयौ तहां संभरि ग्राम । बस्यौ अजमेर सुमंत विश्राम ॥
छं० ॥ ३२६ ॥ रू० ॥ १५५ ॥

---

१५२ पाठान्तर-उच्चर्यौ । उचस्यो । रूच्च । जानो । मुझ । वच्च । लेंहि । कस्यो । सु । वेदहु । क्रिनसु । कै । लेइ । लैऊं । लेऊ । छंडों । कै प्रानं । मुक्कौं । ब अछेह । आनां । दृह । दूम । कहीय । अप । बरिय ॥

१५३-५५ पाठान्तर-पुत्र । पुत्त । प्रगट । कीजीइ । जिय । अंदेस । हुंते । असुरेस ॥ १५३ ॥ विलासन । विलास । न ॥१५४॥ प्रधांनह । मांन । मांकिन । थांन । गाम । सुमंत्र । विश्रांम ॥१५५॥

अन्य उपलब्धों के द्वारा आना का संभरि की पूर्व कथा सँभारना॥

कवित्त ॥ धर मुक्किबलि राय। मात लभ्यौ न कित्त रिस ॥
धर मुक्किय सुत्र पंड। सुष्ष मुक्यौ सु दुष्ष बसि
धर मुक्किय श्रीराम। सिया षोइय बल गोइय ॥
धर मुक्की नल राय॥ सिरहि कालंकित ज्योइय ॥
धर मुक्कि बीर हर चंद न्टप। नीच घरह घट जल भस्यौ ॥
ढंकन सु इला न्टप जानियै। न्टप ढंकन इलचर कस्यौ ॥
छं ॥ ३२७ ॥ रू० ॥ १५६ ॥

न्टप ढंकन इल होइ। इलह ढंकन सु राज भर ॥
षह ढंकन वर देव। देव ढंकन वर अंबर ॥
अएजस ढंकन कित्ति। कित्ति ढंकन जस धारिय ॥
औगुन ढंकन विद्य। सुगुन विद्या उच्चारिय ॥
ढंकनह काल वर भ्रंमको। भ्रंम काल ढंकन करिय ॥
मावित्ति गुरू ढंकै जु सिसु। सिसु ढंकन पित उच्चरिय ॥
छं० ॥ ३२८ ॥ रू० ॥ १५७ ॥

अरिल्ल ॥ इहि विधि आनल बत्त उचारिय। पुब्ब कथा संभरि संभारिय ॥
किहि विधि राषस ढुंढ उपन्ना। सारंगदे कैसे जुद्ध किन्ना ॥
छं० ॥ ३२९ ॥ रू० ॥ १५८ ॥

आना का माता से पूछना कि नर अर्थात् वीसलदेव दानव कैसे हुआ॥

दूहा ॥ एक बत्त तुम सम कहौं। मात कथा समझाइ ॥
नर किहि बिधि दानव भयौ। इह अच्चिरज मो आइ ॥
छं० ॥ ३३० ॥ रू० ॥ १५९॥

१५६--१५७ पाठान्तर--बल। राइ। लिन्यौ। रिस। मुकीय श्री। सुष १ दुष। मुकीय। सीया। षोईय। गोईय। मुक्किय। सिरां। सिरह। कालंक। तज्यो। जोइय। मुंकि। घरहिं। भयौ। इल। भूमि। इल वर। कर्यौ। अप। जस। किति। किति। धारीय। औगनं। सगुन। उचारीय। कों। मा। वित्त ॥ १५७ ॥ वत। उचारीय। किहिं। अपचो। कीनौ ॥

१५८--१५९ पाठान्तर--वत। सों। समझाय। अचरिज ॥ १५९ ॥ जौ। सौ। हूं। जानियौ। नव निहचै नि संदेह ॥

दूहा ॥ जो मोसों सांच न कहौ । तौ हौं कंडों देह ॥
इह अप्पनि जिय जांनि जहु । नव निहचे निज अह ॥
छं० ॥ ३३१ ॥ रू० ॥ १६० ॥

गाहा० ॥ कथि मा कांनन कथयं । जो मो ऊपर पुच हितायं ॥
जीवन हथा परंनी । आना नह आंन उपायं ॥
छं० ॥ ३३२ ॥ रू० ॥ १६१ ॥

आना की मा का कहना कि दानव की कथा न सुन चित्त भंग होगा ॥

दूहा ॥ पुच नि सुनि दानव कथा । श्रवन सुनत होइ भंग ॥
इह अरिष्ट अँग उप्पजै । पित परिपिना प्रसंग ॥
छं० ॥ ३३३ ॥ रू० ॥ १६२ ॥

आना का उत्तर दे कहना कि ऐसे मुझे क्यों डराती है ॥

मुरिल ॥ अैसी कहि मो कहुं डरपावहु । मेरै कछु इह दाय न आवहु ॥
रामाइन भारथ की बाता । सो हौं सबै सुनत हौं माता ॥
छं० ॥ ३३४ ॥ रू० ॥ १६३ ॥

आना की मा का कहना कि जिस से कार्य सिद्धि न हो उसका कहना व्यर्थ है ॥

कवित्त ॥ जिहि पुर गवन न होइ । ताहि कोइ पंथ न बुझै ॥
जिहां दिष्ट नह भिदै । तहां कैसें करि सुझै ॥
जो श्रवन न नह सुनी । सु* कहौ कैसी परि कहियै ॥
जाकै देह न होइ । ताहि कैसै कै गहियै ॥
इह कथा असम अदभुत अति । हठ निग्रह सुत जिन करै ॥
सुनत ही श्रवन दुष उप्पजै । सिद्ध न कोइ कारिज सरै ॥
छं० ॥ ३३५ ॥ रू० ॥ १६४ ॥

---

१६१ पाठान्तर—१६४० में ॥ कथि कथावत कथियं । जो उपर पुत हितायं ॥

१६२ पाठान्तर—पुत्रहि । होय । अंग । उप्पज्यौ । उपज्यौ ॥

१६३ पाठान्तर—कूं । क्यूं । पावहि । मेरे । कछूई । आवहि । वातं । हूं । हूं । हों । हो मातं ॥

१६४ पाठान्तर—गमन । तासु । को । बूझै । जहां । कैसें । सूझै । श्रवनहु । नहु । न । कहु । कहीर । कैसें । गहियै । उपजै । कोय ॥　　सु * विशेष है ॥

आना का प्रत्युत्तर देना कि आगे कितने नर, ऋषि और राइ दानव हुए हैं कथा सुनने से क्या होता है ॥

कवित्त ॥ मात सुन हु मुझ बात। कथा सुनतें कहा लग्गै ॥
केते नर रिष राइ। भए सुर दानव अग्गै ॥
तिन की कथा प्रसंग। सुनहि सब को समुझावहि ॥
तिन कौ जुद्ध विरुद्ध। लोक वेदन में गावहि ॥
इह जांनि मात श्रवननि सुनौं। कहतैं कछु लग्गै नहै ॥
जेजे न्त्रिमांन विधि न्त्रिम्मए। तेते निहचै न्त्रिब्बहै ॥
छं० ॥ ३३६ ॥ रू० ॥ १६५ ॥

आना की माता का बीसलदेवजी की सविस्तार कथा कहना ॥

बीसलदेवजी का जन्म होना ॥

मुरिल ॥ पुत्त सुनहु इह बत्त पुरानी। कहत्तैं होइ गद गद बानी ॥
अनल कुंड आबू रिषि कीनौ। राज उपाइ राज सिर दीनौ ॥
छं० ॥ ३३७ ॥ रू० ॥ १६६ ॥

दूहा ॥ ताके कुल तैं उप्पनौ। महाराज ध्रंमाधि ॥
ताके बीसल देव न्त्रप। सबै राज आराधि ॥
छं० ॥ ३३८ ॥ रू० ॥ १६७ ॥

बीसलदेवजी का पाट बैठना ॥

कवित्त ॥ आठ सैं स इक ईस। बैठि बीसल सु पाट न्त्रष ॥
सुक्रवार प्रतिपदा। मास वैसाष सेत पष ॥

---

१६५ पाठान्तर-बात। सुनतें। सुनि। कोइ। वेदनि। जांनि। कहेतें। कहे। तें। जे जे। न्रमान। न्रमए। न्रिंमए। निरवहै ॥

१६६ पाठान्तर-वत। पुरानी। गहेतें। कहे। ते। वांनी। रिष ॥ १६६ तें।। ऊपनो। धम्माधि। ताके। न्रप ॥

१६७ पाठान्तर-वसल। पाठ। वर। प्रतिपादा। प्रतिपद्दी। सारै। उचारे। उच्चरै। अंगवर। ध्रम। नरै ॥

१६८ हमारे पाठकों को भले प्रकार ज्ञात है कि कुछ दिनों से कोई कोई विद्वान इस ग्रन्थ को आदि से अंत पर्यंत जाली बना हुआ अनुमान करते हैं और जितनी तर्क वे अपने अनुमान को सिद्ध करने को लाते हैं उनमें सब से बड़ी तर्क कि जिस पर दूसरी तर्कों का भी सर्वरीत्या

आये बंस छतीस। विप्र बंदी जन सारे ॥
दियौ छच सिर तिलक। वेद मंचह उचारे ॥

आधार है वह यह है कि इस ग्रन्थ में लिखे हुए संवत् संप्रत शोध हुए और मुसलमानी तवारीखों में लिखे हुए संवतों से नहीं मिलते। अतएव इस संवत् विषयिक झगड़े का प्रारंभ इस रूपक १६८ और छन्द ३३९ से समझना चाहिये क्योंकि रासो के जितने छन्दों में संवत् मिती कहे गए हैं उनमें से प्रथम छन्द यही है। इससे हम को विदित होता है कि संवत् ८२१ वैशाख शुदी १ शुक्रवार को बीसलदेवजी राज-गद्दी पर विराजे किन्तु इसी आदि पर्व में इस रूपक से थोड़े से ही और आगे बढ़कर हम को बीसलदेवजी के पट्टन विजय करने के संवत् सूचन करनेवाले नीचे लिखे रूपक मिलेंगे—

(संवत् १८५९ की पुस्तक में)

दोहा ॥ सो संवत् नव सत अट्ठ। बरस तीस छह अग्ग ॥
पुर पट्टन वीसल नृपति। राजत सग्गलह जग्ग ॥

कवित्त ॥ संवत् नव सत अट्ठ। बरस दस * तीथ सत्त अग्ग ॥
पुर प्रविष्ठ वीसल नरिंद। राज्यंव सयल जग्ग ॥

(संवत् १७७० की पुस्तक में)

दोहा ॥ सो संवत् नव सत्त अध। बरस तीस छह अग्गि ॥
पुर पट्टन वीसल न्रपति। राजत सयलह जग्गि ॥

कवित्त ॥ सर संवत् नव सत्त। बरस दस * पंच सत्त अग्ग ॥
पुर प्रविष्ठ वीसाल। न्रपति राजंत समल जग ॥

(गुजरात देश की पुस्तक में)

दोहा ॥ सो संवत् नव शत अधिक। वर्ष तीस छह अग्ग ॥
पुर प्रतिष्ठ त्रिशल नृपति। राजत सकले जग्ग ॥

जितनी पुस्तकें हम इस टिप्पण के लिखते समय देख सके उन सब में ऊपर लिखे पाँठ पाए अर्थात् किसी में हमारी सं० १८५९ का पाठ मिलता है तो किसी में संवत् १७७० वाली का। शोक की बात है कि हमारी १६३१ तथा १६३२ वाली पुस्तक में तो यह पर्व्व ही नहीं है और संवत् १६४७ वाली में यह पृष्ट नहीं है कि जिसमें इन छन्दों का होना सम्भव है। यह तो जानने में ही है कि पिछले रूपक १४० में चंद कह आया है कि "चोसट्टि बरस बर राज कीन" चोंसठ

* हिन्दी भाषा के ऐसे काव्यों में चंद जैसे महाकविकों की गूढ़ बातों को खोलने की कुंजियों में से हम एक का यहां प्रकाश करते हैं कि दश दस और दशि दसि शब्दों का अर्थ जहां वे कुछ संख्या प्रकाश करने को प्रयोग हुए हों वहां सूक्ष्मता रखते हैं अर्थात् दश अथवा दस = १० का वाचक और दशि अथवा दसि = शून्य० अर्थात् केवल दहाई का वाचक होता है और जहां लेखक दोष से इन शब्दों के लिखने में गड़बड़ हो जाती है वहां संख्या में भी गड़बड़ पड़ जाती है कि इस के उदाहरण इस महाकाव्य में यहां से लेकर अनेक स्थलों में आवेंगे ॥

आनंद अगगवर इन्द्र सम। अंम नंद जस उद्दरै॥
अजमेर नयर अरि जेर करि। विमल राज बीसल करै॥
छं० ॥ ३३८ ॥ रू० ॥ १८ ॥

बरस बीसलदेवजी ने राज्य किया। अब विद्वानों के विचार देखने जैसी बात है कि इस रूपक के संवत् को इसी प्रकरण के दूसरे रूपकों में कहे संवतों से मिलाने से एक सौ वर्ष का फरक पड़ता है और जो ९१ वर्ष का एकसा अन्तर रासो में लिखे सब संवतों को संवत शोध से मिलाने और जो परवाने हमने पृथ्वीराजजी के शोध किये हैं उनसे पड़ता है वह इस से सिवाय है। जगत का एक यह सर्व साधारण नियम है और उसका भार सब पक्षपात रहित विद्वानों पर है कि प्रत्येक समय के विद्यमान बड़े बड़े विद्वान सब परम पद-प्राप्त ग्रन्थकर्त्ताओं के ऊपर जो कोई व्यर्थ आक्षेप करें उस को खण्डन कर के छिन्न भिन्न कर दें क्योंकि यदि यह भार विद्वानों पर स्वतः सिद्ध न रहा होता तो सब कीट क्रिकिट सब अमूल्य ग्रन्थों को काट कर खाजांय और बड़े बड़े कवियों के नामों पर पोता फेर दें। अतएव ऐसी जिम्मेदारी को शुद्ध अन्तःकरण से समझने वाला कोई विद्वान क्या यह कहेगा कि भिन्न भिन्न पुस्तकों में यह भिन्न भिन्न अशुद्ध पाठ चन्द कवि जैसा महाकवि बीसलदेवजी की तरह दानव होकर लिख गया है? क्या इन भूलों का अपराधी चन्द है? नहीं-नहीं-कभी नहीं। हम क्या एक छोटा सा बालक भी कह सकता है कि यह सब भूलें अयोग्य लेखक और कवियों ने जान कर अथवा अनजाने की हैं। अब हमारी सम्मति इस विषय में चन्द की शैली और ख्यातिओं की पुस्तकों में लिखे सं० ९३१ को देखते हुए ऐसी है कि यहां ऐसा पाठ था कि "नौ सैं अरु इकतीस" और इस हमारे अनुमान की पट्टन विजय करने के संवत् वाले रूपक पुष्टि करते हैं। देखो :-

बीसलदेवजी का पाट बैठना	९३१ वर्ष
उनका राज्य करना जोड़ो	६४ वर्ष
रासो के संवतों और विक्रम में जो सर्वत्र एकसा अन्तर है वह जोड़ो-	९१ वर्ष
विक्रमी संवत्	१०८६

रासो के रूपकों के जो मूल पाठ अशुद्ध हैं उनको अभी हम जैसे लिखित पुस्तकों में हैं वैसे ही रक्खेंगे क्योंकि जब तक सब विद्वान एक मत न हो जांय तब तक उनको हम पुरातत्त्व विद्या के नियमों के अनुसार बदल नहीं सकते हैं। इस के अतिरिक्त हम पुरातत्त्व वेत्ताओं को चेत कराते हैं कि फीरोज़शाह की लाट पर की प्रशस्तियों को अब एक बार प्रथम बीसलदेवजी के और पृथ्वराजजी के चरित्रों को भले प्रकार ग्रन्थान्तरों में पढ़कर उन आशयों के सहारे से फिर विचारें तो उन को मालूम हो सकेगा कि पहिली प्रशस्ती जिसमें का नीचे लिखा अनुवाद है उस को बीसलदेवजी की नहीं समझना चाहिये किन्तु पृथ्वीराजजी की समझना उचित है और केवल यही विशेष समझना होगा कि बीसलदेवजी के उपलक्ष का सम्बन्ध उस में इतना ही है कि जिस मिती को वह प्रशस्ती निर्माण हुई है वह मिती बीसलदेवजी के पाट बैठने की है अर्थात् बैशाख शुदी १ और पृथ्वीराजजी को बीसलदेवजी का अवतार होना लोग मानते हैं अतएव इन प्रशस्तियों के लिखनेवालों ने अपने इस गूढ़ भाव को प्रकाश करने में उन दोनों का सादृश्य दिखाया

बीसलदेवजी का अंत समय पट्टन विजय करने को छत्र धारण करना ॥

दूहा॥ बर पट्टन अट्टन अमित । समित वेद फुनि राज ॥
समय अंत बीसल्ल सिरह । धर्यौ छत्र सम साज ॥
छं० ॥ ३४० ॥ रू० ॥ १६९ ॥

पद्धरी ॥ सिर धारि छत्र बीसल नरिंद । आसनह सिंघ बर बरन इंद ॥
भूदेव मंडि वेदी विसाल । रस पंच मेधि मेलैं ति काल ॥ छं० ॥ ३४१ ॥
बर बढी ज्वाल खंडन विभाग । जमि रहे जमल पुट पलनि लाग ॥
मष समुष दिष्य परसपर बैंन । तिनपुटह बीच तन धूम ऐंन ॥छं०३४२॥
जानीत वेद मुख रचै मौंन । सुभ समय असुभ उच्चार कौंन ॥
संपूर वेद किन्नो भिषेक । दुज दइय बंदि आसिष असेष ॥ छं० ॥ ३४३ ॥
विधि ऐन राज दिय सु लप माल । जै जया सबद बीसर्ल भुआल ॥
छं० ॥ ३४४ ॥ रू० ॥ १७० ॥

है कि जिस से निर्णय करने में यह झगड़ा पड़ जाता है कि अमुक प्रशस्ती प्रथ्वीराजजी की है अथवा बीसलदेव जी की । हमारे पास इन प्रशस्तियों संबन्धी सब संज प्रस्तुत नहीं हैं और न इतना अवकाश है नहीं तो हम ही परिश्रम करके कुछ विशेष सारांश प्रकाश करते । इस के अतिरिक्त जो सं० १२३० जैसी प्रशस्तियों को बीसलदेवजी की मानें तो फिर पृथ्वीराजजी को तेरहवें शतक में मानना पड़ेगा कि उस दशा में भी पृथ्वीराजजी चितोड़ की और आबू की प्रशस्तियों के अनुसार रावल समरसीजी के समकालीन होंगे और मुसलमानी तवारिखों के सन झूठे ठहर कर संप्रस्त प्रसूत हुई तर्क के अनुसार मुसलमानी तारीख जाली सिद्ध होंगी ॥

OM.

In the year 1230, on the first day of the bright half of the month Vaishakh (a monument) of the Fortunate—Visal—Deva—son—of—the--Fortunate--Amilla--Deva--King—of—Sacumbhari,

Popular Ed. of the Asiatlc Researches, page 315.

पाठान्तर–पाठ । बर । वर । प्रतिपादा । प्रतीपट्टी । छत्तीस । सारै । दीयै । उच्चारे । नैर ।
१६९ पाठान्तर–पुनि । समैं । सरह । धर्यौ । जास ॥
१७० पाठान्तर-मंडि । छत्रधारि । बंवरन । इंद्र । मधि । मेले । मले । मेलिय । वढिय । वटी । दिषि । बेन । पुट । हवी । चतन । ऐंन । रहे । मले मोंन । शुभ । अशुभ । कोंन । कीनो । बंध । बंधि । एन । शद्द । भुवाल ॥

बीसलदेवजी पाट बैठकर कैसे राज करते थे ॥

दूहा ॥ लसय पाट बीसल न्टपति । विकल इच्छ घन मार ॥
पंडन चिय दंडन करै । बिन अपराध अनार ॥
छं० ॥ ३४५ ॥ रू० ॥ १७१ ॥

कवित्त ॥ इसौ बीर बीसल्ल । नरिंद अजमेर नैर पर ॥
रचि रचना पुर दिव्य । मनों विसकम्म कीय कर ॥
अधम धंम उप्परैं । क्रंम दुक्रित मन इच्छै ॥
चक्क द्रव्य संग्रहै । बिना चक लोभन बंछै ॥
चव बरन सरन चहुआन कै । वंस छतिस सेवंत ची ॥
बीसल नरिंद ध्रंमाधिधरि । देव कला देवत्त ची ॥
छं० ॥ ३४६ ॥ रू० ॥ १७२ ॥

बीसलदेवजी का अपने पुत्र सारंगदेवजी को उपदेश करके सांभर भेजना कि जो अपनी धा-बैन के पति के विनाश से दुचित हो गए थे ॥

कवित्त ॥ पट रागिनि परिहार । ग्रभ्भ सारंग उपन्नौ ॥
पुच होत अइ म्टत्य । बाल बानिक कौं दिन्नौ ॥

---

१७१ यह रूपक संवत् १७७० और १६४७ की पुस्तकों में तो नहीं है किन्तु सं०१८५९ तथा सोसाईटी की छापी हुई पुस्तकों में है जब कि इन से भी बहुत पुरानी पुस्तकों में यह न मिले तब तक उसको क्षेपक संज्ञा हम नहीं दे सकते यहां यह भी समझ लेने योग्य बात है कि १६९ रूपक से १७० रूपक तक बीसलदेवजी की पाटन की चढ़ाई के लिये छत्र धारण करने का वर्णन है । प्राचीन समय में जब कि राजा किसी पर चढ़ाई करते थे छत्र धारण विधि का वैदिक कर्म करके प्रस्थान करते थे । पाठकों को यह बीसलदेवजी की कथा बहुत सावधानता से पढ़नी चाहिये क्योंकि इस के बीच बीच में उन के लड़के सारंगदेवजी आदि के भी वृत्त आते जाते हैं परन्तु उन सब को कवि ने बीसलदेवजी के वृत्तों में मिलाकर वर्णन किया है ॥

पाठान्तर–इछ ।

१७२ पाठान्तर–बीसल । नेर । मनौं । विश्वक्रम्म । विसक्रम्म । बिसकर्म्म । करि । अधंम । धम । ऊपरै । क्रम । दुक्रित । नन । इछै । विनां । हक्क । लोभ । न । बछैच । चहुवांन । छतीव । धमाधिधार । देव । ताही ॥

१७३ पाठान्तर–पाट । रानि । ग्रभ । उप्पनौ । भय । मृत्ति । कौं । दीनौं । बनिक । दिनी । सम । पै । इक्क । लगें । कीयौ । बीना । हुवे । गये । बिनस्सयौ ।

ता बानिक नंदिनिय । नाम गौरी सारँग सन * ॥
इक थान पय पान । इक्क सिज्या इक आसन ॥
नव बरस लग्गि कन्या रही । व्याह राज बीसल कियौ ॥
बीबाह हुअे बर बन गयो । तहां सिंघ बर विनसयौ ॥
छं० ॥ ३४७ ॥ रू० ॥ १७३ ॥

दूहा ॥ सिंघ विनास्यौ वनिक सुत । कन्या किया अंदोह ॥
हत्त धर्यौ ब्रह्मचर्य कौ । तप पहुकर तजि मोह ॥
छं० ॥ ३४८ ॥ रू० ॥ १७४ ॥

पद्धरी ॥ अति दुचित भयौ सारंग देव । नित प्रत्ति करै अरहंत सेव ॥
बुध ध्रम्म लियौ बंधै न तेग † । सुनि श्रवन राज मन भो उदेग ॥ छं०॥३४९॥
बुल्लाइ कुंअर सनमान कीन । किहि काज तुम्म इह ध्रम्म लीन ॥
तुम छंडि सरम हम कह्यौ बत्त । बांनिक्क पुत्र हुन तैं दुचित्त ॥ छं० ॥ ३५०॥
इह नष्ट ग्यांन सुनियै न कान । पुरषातन भज्जै कित्ति हान ॥
तुम राज वंस राजनह संग । मृगया सर षेलौ वन दुरंग ॥ छं० ॥ ३५१॥
परमोध तजो बोधक पुरान । रामाइन सुन भारथ निदान ॥
अभिमान दान रिन सरन ध्रम्म । चार्‍यौ प्रकार सुनि राज क्रम्म ॥छं० ॥३५२॥
परमोध मानि राजन कुमार । तत काल मंगि बंधे हथ्यार ॥
भय प्रसन राज कीनो पसाव । संभरि रजधानी करहु आव ॥ छं० ॥ ३५३ ॥
गजराज पाट दै बर उतंग । सिंघासन दीनो जटित नंग ॥
तुम जाहु कुंअर संभरिय थान । किरपाल करिय कायथ प्रधान ॥ छं० ॥३५४॥
प्रोहित मुकंद‡ सारँग चुहान । साचैार धनी नरसिंघ भांन ॥
षंधार लार बहबल बलोच । दिय बहुत हसम कीयौ न [illegible]च ॥ छं० ॥ ३५५ ॥

* यह पाठ हम ने सं० १६४७ तथा १७७० की पुस्तकों से रक्खा है इधर की सब पुस्तकों में सम पाठ है । सनोतिषणुदाने तथा त्रि० अखण्डिते ॥ अथवा सं० सून वा सूनु का अपभ्रंश है ।
१७४ पाठान्तर-कन्या । कीयौ । वृत धर्यौ । पुहुकर ॥
† हिं० तेग from Sk· (तैग्म्य (तिग to assail, to seek, to injure, to attempt, to kill) or तिग्म = sharp as a weapon) इसी तरह हिं० तेज is not from the A. Tayz, or P. Tez, but from the Sk. तेज m. Sharpness, pungency, sharpness of a weapon, brilliancy, spirit.
‡ यह नागर जाति का ब्राह्मण था ॥
१७५ पाठान्तर-प्रति । ध्रम । कीयैा । वंधे । स्रवन । भय । बुलाय । कुवर । तुम । धम । धर्म । वृत । वानिक । तैं । दुचित्त । ग्यांन । सुनिये । सुनीयै । कांन । भजै । छित्ति ।

अनेक जाति उमराव सथ्थ। हैं गै नर बाहन सुनर हथ्थ ॥
तिहि बार धाय बानिक बुलाय। जिन जाहु कुँअर की सथ्थ काय॥ छं० ॥ ३५६॥
तुम कियौ पुच सौं मेक मुंड। षिष्मि वैन कह्यौ कहा देहुँ दंड ॥
अजमेर मेल्हि संभरि दिसान। जो जाहु तब्ब षंडौ परान ॥ छं० ॥३५७॥
इतनी कथ्थि न्रप चल्यौ सथ्थ। रथ च्यार भरे तिन वार अथ्थ ॥
जोजनह एक कीनौ मिलान। अनेक भष्य तहां षान पान ॥ छं० ॥ ३५८॥
भय प्रात प्रसन पग लग्गि पुत्त। चलि सीष मंगि संभरि पहुत्त ॥
सुर जाय पहूचिय संभ राय। मन वच सुद्ध करि क्रंम नाय॥ छं० ३५९ ॥
दस महिष भँजि तहां बलि सु दीन। जज होम धोम सुर प्रसन कीन ॥
कीनौ प्रवेस सुर महिम मौलि। तोरन कलस बंधि राज पौलि ॥
छं० ॥ ३६० ॥ रू० ॥ १७५ ॥

कवित्त ॥ कियं प्रवेश सारंग। देव संभरिय थान थिर ॥
आयेह वैस्य षिचिय। अनेक पग लग्गि नम्मि नर ॥
तब कायथ किरपाल। सबन कौं आग्या दीनी ॥
सस्त्र वस्त्र दत चित्त। देय दिलासा कीनी ॥
जहवनि गौरि आइय जबहि। पाइ लगी परमार कै ॥
नव सगुन भए सगुनी कह्यौ। कुँअर होइ कुमार कै ॥
छं० ॥ ३६१ ॥ रू० ॥ १७६ ॥

दूहा ॥ देवराज रावन सुता। देवत्तनि जद्दौन ॥
गौरि काम सारंग वर। मनरति ब्नरति जौंन ॥
छं० ॥ ३६२ ॥ रू० ॥ १७७ ॥

षोलो। सुनहु। रिण। धम। चाय्यो क्रम। कूंआर। वंधे। हथ्यार। हुव। प्रसन्न। रजधान संभरिय करह जब। हें। कुमर। थांन। करीय। प्रधांन। सारंग। चुहांन। चैहान। धनीय। भांन। दिये। हसंम। कियो। वांनिक। बुलाई। सथ सों। मूठ। वन। कह्यो। दिसन। षरांन। कथ। सथ। मथ्य। सथि। जोजन। अरक। लगि। पहुँत। वच। नाह। भंजि। बांली। प्रसन्न। तोरंन कलस बंधेति पौल ॥

१७६ पाठान्तर-थांन। आय। आइ। षित्रि। को। अग्या। ससत्र। शस्त्र। चित्त। दिलासा। किनी। जदवनि। पाय। कुंअर। कुंमार ॥

१७७ पाठान्तर देवतनि। जदौन। मनौ। रनि। मनोरति ॥

बीसलदेवजी का मृगया से बहुरना, एक तालाब बनाने की आज्ञा देना और दरबार करना ॥

दूहा ॥ तब बाहुरि बीसल नृपति। मृगया षेलत बन्न ॥
देषि थान सर*उद्धरन मतौ उपायौ मन्न ॥ छं० ॥ ३६३ ॥ रू० ॥ १७८ ॥

पद्धरी ॥ तब देखि नरिन्द अनूप ठाम। निर्झर गिरिन्द बन अभिराम ॥
बुलाय लिए मंत्री प्रधान। सर * रचौ इहां पहुकर समान ॥ छं० ॥ ३६४ ॥
फुरमाय † काम अप आय गेह। आनंद अंग उपज्यौ अछेह ॥
बैठो सिंघासन ध्रम्म नंद। बीसल नरिन्द नर लोक इंद ॥ छं० ३६५ ॥
सिर छत्र पास दुय चमर ढार। अति रूप जानि अस्विनि कुमार ॥
आईय सु कुलि छत्तीस नाम। पावासर तोंवर गौर राम ॥ छं० ॥ ३६६ ॥
हजूर लए राजन बुलाइ। तंबोलि दियो सनमुष्य चाइ ॥
पढि बंदि छंद बोले विरद्द। मुसकाय सीस नायौ नरिन्द ॥ छं० ॥ ३६७ ॥
सब सभा पूरि जैसैं नछित्त। चहुआन बीच जनु चंद रत्त ॥
सनमान करे सब दइय सीष। फिरि बंदी जन दीनी असीष ॥ छं० ॥ ३६८ ॥
निसि गई पंच पल एक जाम। राजन्न महल्ल ‡ प्रावेस ताम ॥
करपूर अगर मृगमद सु वास। सौंधे छिरक्कि उत्तिम अवास ॥
छं० ॥ ३६९ ॥ रू० ॥ १७९ ॥

---

* यह बीसल का तालाब अब तक अजमेर के पास विद्यमान है। उस के किनारे पर जहांगीर पादशाह ने एक महल बनाया था कि जिस में उसने इंग्लिस्तान के पादशाह जेम्स पहिले के एलची से मुलाक़ातें की थी। इस टिप्पण को हमने इस तालाब के किनारे पर खड़े होकर लिखा है। यदि कोई पुरातत्ववेत्ता इस तड़ाग की वर्त्तमान दशा अपनी आंख से देखे तो उस को बड़ा शोक और आश्चर्य होगा कि अंग्रेज सरकार के राज्य समय में ऐसे प्राचीन स्थलों का जीर्णोद्धार राज–कोश के द्रव्य से होता है परंतु रेलवाले अपनी रेल इस पर दौड़ा दौड़ा उस को छिन्न भिन्न करे डालते हैं कि पांच सात वर्ष पीछे वह समूलनष्ट हो जायगा। हमारी सम्मति में यह विषय पुरातत्ववेत्ता विद्वानों और समस्त भारत प्रजा को सरकार हिन्द की सेवा में मिमोरियल करने योग्य है कि जिससे यह ऐतिहासिक चिन्ह यथास्थित बना रहे।

† यह भी हिन्दी शब्द है संस्कृत स्फुरितम् अथवा स्फूर्तिः=स्फुरणे, मनसः कल्पनायाम् से ॥

‡ यह भी हिन्दी है संस्कृत महल्ल=अंतःपुर inner appartments, palace. और महल्लिक=अंतःपुर रक्षक से ॥ १७८ पाठान्तर–नृपति। वन। थ न। मतो। मन ॥

१७९ पाठान्तर–नरिंद। निझर। नझंरन। गिरंद। अभिराम। वुलाय। लये। रचो। समांन। बैठो। सुसिंघासन। ध्रम। नरिंद समीप। दोय। जांनि। अस्वनि। आइय। कुली। छतीस। ताम। पावासिर। तूंवर। वुलाय। वुलाहि। दीयौ। सनमुख। चाहि। चाय। छंद। बंद्रि। विरद्द। नाम्यो। जैसं। चहुवान। सनमान। दईय। जांम। राजन। थांम। कर्पूर। सोंधे। छिरक्कि। उत्तम ॥

बीसलदेवजी का रणवास में पधारकर विश्राम करना और उन की एक अप्रिय रानी का उनको नपुंसक करना ॥

कवित्त ॥ सुरँग धाम अभिराम। तहां बिस्राम राज किय ॥
राग रंग नाटक। विनाद सुष महल बाल लिय ॥
पट रागिनि पांवार। रूप रंभा गुन जुब्बन ॥
प्रमुदा प्रान समान। नहीं विसरत्त इक्क छिन ॥
रति भाग सुरति तिन सों सदा। कबहु आन न दिक्ख चिय ॥
षिझि सौति सकल एकच भय। पुरषातन तिन बंध किय ॥
छं ॥ ३९० ॥ रू० ॥ १८० ॥

पद्धरी ॥ तब सकल भइय एकच नारि। पुरुषातन तिन बंध्यौ विचार ॥
प्रचार सहर दूतिका च्यार। लै षवरि सहर पहुची मझार ॥ ३७१ ॥
प्रसताव भाव तिन कहि उचार। जोगिनिय बोल आदीतवार ॥
पहराइ बेस बदलाय भेस। इम किया राजद्वारह प्रवेस ॥ ३७२ ॥
लै अध्य दई दरवान हथ्य। इम किय प्रवेस सहचरिय सथ्य ॥
जोगिनिय गई रागिनी मद्धि। सब बोलि कह्यौ है सिद्ध सिद्ध ॥ ३७३ ॥
आदेस कियौ सब पाइ लगि। आसन्न जोरि कर उभ्भ अग्ग ॥
किहि काज आज हूं बोलि लीन। किहि नार तुमहि इह सीष दीन ॥३७४॥
सब सौति कह्यौ दुष सुनहु तुम्म। राजन्न तनय हम सों न कम्म ॥
को जानि मात बिंझनी पीर। सौति कौसाल सालै सरीर ॥ ३७५ ॥
तुम कहै, करहं जीव तै बद्ध। तुम कहा करौं नारी विरुद्ध ॥
तुम कहा करौं काम तै भंग। ज्यों नारि अंग त्यों पुरुष अंग ॥ ३७६ ॥
सब चित्त बसी इह सौति बात। अब वी इह कारज करो मात ॥
मंगाय अगिनि तब कियौ होम। षर स्वान मांस प्रति वास धोम ॥ ३७७ ॥
उच्चर्यौ मंच आराधि इष्ट। तत काल भयौ काम तै नष्ट ॥
दस दिसा लगि इह करी विद्धि। गत भौ पुरुषातन रहि न सिद्धि ॥ ३७८ ॥
दै द्रव्य कह्यौ माता सिधाव। इह सहर छंडि अनि सहर जाव ॥

१८० पाठान्तर-सुरंग। मुष ताम। विश्रांम। मुष। पंवार। जुवन। प्रांन। समांन। इक। स्यं। नि। दरस। सोकि। भई ॥

बीसलदेवजी का पुरुषत्व नाश होने से दुचित्त हो गोकर्णेश्वर की यात्रा करने को गुजरात में जाना ॥

अति दुचित राज भय काम नास । ब्रह्मचर्य नेम लियौ चतुर मास ॥३७९॥
कातक्क करत पहुकर सनान । गोकन्न * महातम सुनत कान ॥
बुल्लाय जैतसिय गोल्लवाल । तुम भूमि पास नागरद्द† वास ॥३८०॥

---

* इन गोकर्णेश्वर महादेवों की उत्पत्ति-कथा स्कंध पुराणान्तरगत जो नागर ब्राह्मणों का एक परमपूज्य संस्कृत भाषा में २४००० हजार श्लोक की संख्या का नागरखंड नामक ग्रंथ है उस के २६ वें अध्याय में लिखी है। यह संपूर्ण ग्रंथ मेरे पुस्तकालय में है ॥

आज जो बडनगर और वीसन नगर नामक नगर गुजरात में प्रसिद्ध हैं उन का प्राचीन नाम चमत्कारपुर था, उस की सीमा का प्रमाण उक्त ग्रंथ के १६ वें अध्याय में नीचे लिखे प्रमाण लिखा है अर्थात् इन गोकर्णेश्वरों को उस की दक्षिणोत्तर सीमा पर होना प्रकाश किया है–

ऋषय ऊचुः ॥ चमत्कारोपुरोत्पत्तिः श्रुतात्वत्तो महामते ।
तत्क्षेत्रस्य प्रमाणं यत्तदस्माकं प्रकीर्तय ॥ १ ॥
यानि तत्र च पुण्यानि तीर्थान्यायतनानि च ।
सहितानि प्रभावेन तानि सर्वाणि कीर्तय ॥ २ ॥

सूत उवाच ॥ पंचक्रोश प्रमाणेन क्षेत्रं ब्राह्मण सत्तमाः ।
आयामव्यास तश्चैव चमत्कारपुरोद्भवं ॥ ३ ॥
प्राच्यां सस्यां गयाशीर्षे पश्चिमेन हरेः पदं ।
दक्षिणोत्तरयोश्चैव गोकर्णेश्वर संज्ञिकं ॥ ४ ॥

हाटकेश्वर संज्ञं तु पूर्वमासी द्विजोत्तमाः ।
तत्क्षेत्रं प्रथितं लोके सर्वपातकनाशनं ॥ ५ ॥
यतः प्रभृति विप्रेभ्यो दत्तं तेन महात्मना ।
चमत्कारेण तत्स्थानं नाम्ना ख्यातिं ततो गतं ॥

† नागरद्द=जो नागरखंड जिसके भले प्रकार पढ़ने में आया होगा वह कह सकता है कि अनर्त देश में हाटकेश्वर क्षेत्र हैं उस में जो आज बड़नगर नाम से प्रख्यात है वह नगर यही है। इस के सतयुग में आनन्दपुर, त्रेता में चमत्कारपुर, द्वापर में मानपुर अर्थात मैनीपुर, और कलि में नगर अर्थात् बड़नगर नाम प्रसिद्ध हुए हैं। इस के अतिरिक्त यह भी ध्यान में रखने योग्य बात है कि नागर ब्राह्मणों में से जो आज बीसननगरा नामक नागर ब्राह्मण प्रसिद्ध हैं वे बड़नगरों में से इन्हीं बीसलदेवजी के समय में उन के दान लेने से पृथक हुए हैं और बीसननगर नामक जो नगर आज गुजरात में प्रसिद्ध है वह इस समय का इन ही बीसलदेवजी का प्रदान किया हुआ है। नागरखंड से यह भी ज्ञात होगा कि बीसलदेवजी के समय में जिन नागर ब्राह्मणों को दान दिया गया है उन में से कुछ उस समय पुष्कर में भी रहते थे और येही लोग बीसनदेवजी को पुनश्च पुंसत्व प्राप्त कराने को गोकर्णेश्वर की यात्रा जिस का

तुम देस कहीजै गोउक्कन्न । परवत्त सरोवर नदी रत्न ।
महाराज उहां महादेव थान । बानास नदी कैामारि कान ॥ ३८१ ॥
गिरवर उतंग इक तीन कोस । निझरना झरत मन आव जोस ॥
केनोक दूर अजमेर हूंन । दिन दोय मंझ नीके पहूंन ॥ ३८२ ॥
चढ़ि चल्यौ राज गोकन्न दिसान । मै मंत गुरिय घूंमत निसान ।
आवाजि पहूंचिय दस दिसान । अरि भ्रमैं वन्न तजि थान थान ॥
छं० ॥ ३८३ ॥ रू० ॥ १८१ ॥

दूहा ॥ अरि उद्यान भ्रमि थान तजि । बजि पर घंड अवाज * ॥
मच्छितपुर † गोकन्न दिसि । पहुँच्यौ बीसल राज ॥
छं० ॥ ३८४ ॥ रू० ॥१८२ ॥

कवित्त ॥ गिरि उतंग सच्छिता । विहंग उद्यान थान घर ॥
सघन छांन पंषी । असंषि रच्छि लता भुंमि नर ॥

वर्णन यहां कवि ने किया है ले गए थे और अजमेर के चाहुआन राज्य के पुरोहित भी यही नागर ब्राह्मण थे कि उन में से एक पुरोहित मुकुन्द का नाम १७५ रूपक में आ चुका है। नागरों की पुरोहिताई छुटने पर अन्य ब्राह्मण चोहानों के पुरोहित हुए हैं ॥

* यह संस्कृत अ+वाज तथा आ+वाज अथवा अवाद तथा आवाद से है ॥

† जो हाल में गुजरात प्रान्त में **वड़नगर** कहलाता है उसी का नाम है । **नागरखंड** के पढ़ने से उस के कितनेक अन्य नाम भी ज्ञात होंगे जैसे वृद्धपुर वृद्धनगर आदि । उक्त ग्रंथ में यह भी पढ़ने में आवेगा कि इस स्थान में एक समय सर्पों का बड़ा उपद्रव हुआ था और वह महादेवजी के चिजात ब्राह्मण को **"नगरम् नगरम्"** मंत्र प्रदान करने से दूर हुआ कि ईसी से वह **नगर** कहाया । इस नगर के रहनेवाले नागर ब्राह्मण अब तक प्रसिद्ध हैं । यह कथा नागरखंड के ११३ वें अध्याय में सविस्तर लिखी है ॥

पाठान्तर–ईर्द । वंधर । प्रच्यार । सहस । प्रस्तार उच्यार । जोगनीय । अथि । चहुंवान । कीय । सहचरा । सथ । जोगिनी । आद्रैस । कीयो । आसन्न । उभ्भ कर जोगि अग्ग । किंह । हम । ताम । काम । जानै । बाझनी । कैा । माल । सालैं । करैां । करैां ते । सो । करैां । अगनि । उचस्यौ । आराध । तैं । लगि । विद्ध । रहित । कातिग । करंन । सानाना । सुनहु । छांन । पांसल । पास कल । कहीजै । गोकन्न । परब्रत । माहाराज । बबास । कोमारिकान । निझरना । मझ । नीकै । मैं घुम्मन । दिसांन । थांन ॥

१८२ पाठान्तर-उद्यांन । थांन । तच्छितपुर । गोकन । पहुंच्यो ॥

१८३ पाठान्तर-उघ्यान । उद्यांन । छांह । असंख्य । भुंमि । बरन । पुहुप्प । पीक । चकोर । चकोर । सारस । दिपि । अनूप । ठांम । आरांम । फरसत ॥ इस रूपक का पहिली दो तुकों की पहिली यतियों में दस दस मात्रा हैं और दूसरी में चोदह चोदह कि यह कोई ऐसा दोष नहीं कि जिस के लिये हम ग्रंथ-कर्त्ता को दोष दें । ऐसे उदाहरण अन्य बड़े २ कवियों के काव्यों में

बरन बरन्न पल्लव। पहुप द्रुम वेलि केलि फल्ल ॥
कीर पिक्क चक्कोर। मोर कोकिल कैातूहल्ल ॥
बाराह सिंघ मृग जूथ जहां। दिष्षिराज अचरिज भयौ ॥
अनूप ठाम आराम अति। सिव परसत सब सुष भयौ ॥
छं० ॥ ३८५ ॥ रू० ॥ १८३ ॥

कवित्त ॥ परबत में कंदरा। तहां किन्नर सु विराजै ॥
बारि बूंद सिर झरै। पास सिँघ जूथ समाजै ॥
आनि अचानिक राज। पाइ लगो करि प्रन्न पति ॥
ॐ नमो सिव सकल। नमो अकलेस अकल मति ॥
फल पहुप द्रव्य पंचा अम्रत। धूप दीप अग्गें धरिय ॥
असनान दान बहुवान करि। तब अस्तुति सेवा करिय ॥
छं० ॥ ३८६ ॥ रू० ॥ १८४ ॥

बीसलदेवजी का गोकर्णेश्वर महादेव की स्तुति करना ॥

भुजंगी ॥ नमो बाय भूताय थानं भयानं। जटा मांझि गंगा झलक्कै प्रमानं ॥
चयं नेच ज्वाला जलं चंद्र भालं। विषं कंठ माला रुलै रुंड मालं ॥३८७॥
मचा आदि मुद्रा नषं सिंगि नादं। सिधं देव देवं कथं साथ साधं ॥
धरा धूरि धूसं विभूतं घसंते। नमस्ते नमस्ते नमस्ते नमस्ते ॥ ३८८ ॥
गजं चर्म आछादितं भ्रंम नासं। रचै गौरं भैरों गनं आस पासं ॥
पद्मासनं पुष्टि नंदी प्रचंडी। चवं वेद आमोद चौसट्ठि चंडी ॥ ३८९॥

भी देखने में आते हैं अतएव इस को कवियों की एक शैली मानना चाहिये। ऐसे स्थलो में प्रायः शुष्क-कवि आपस में बहुत वाद विवाद कर सिर फोड़ा करते हैं अतएव हम एक और भी सूक्ष्म कारण बताते हैं कि चंद और सूर जैसे आर्द्र-कवि गान विद्या में पारंगत होने के कारण जहां एक ही यति में अनेक स्वर स्वरित हो गये हों वहां की एक दे मात्रा को दूसरी यति में मिला देते हैं कि जिस में स्वर न बिगड़े देखो यहां उतंग के तं और सलिता के ता पर स्वर स्वरित हो गये हैं ॥

१८४ पाठान्तर-प्रबत्त। किंतर। बुंदि। नषै। सिंघ। पाय। प्रनति। उं। द्रबि। पंचे। दांन। बहुदांन।

१८५ पाठान्तर-झलकै। बंदे। सधं। दुरि। द्रुसं। भैरूं। आसा। पासं। पद्मासनं। ष्टी। कोद। चौसठि। हक। डोरूं। लड़कै। मेरे। धूजे। धनुंकं। धरें। वांम। सूलपांणी।

बजै डक्क डौंरु डमंकं तडक्कै । धकै मेरु धुज्जै चकै गैंन चक्कैं ॥
धनूकं पिनाकं धरै बाम हस्ते । नमस्ते नमस्ते नमस्ते नमस्ते ॥ ३९० ॥
सिधं साध आराधयं शूलपानी । सिवा भ्रंम साधेति के साध जानी ॥
नरं किंनरं गंध्रवं नग्ग जष्यं । सुरं आसुरं अच्छरी हूर रष्यं ॥ ३९१ ॥
सनक्कादिकं सप्तर्षी बाल-कालं । प्रथीवायुगेनाय तेजंस लालं ॥
नमो भान चंद्रं नवं ग्रह समस्ते । नमस्ते नमस्ते नमस्ते नमस्ते ॥
मिटै संकटं बाट घाटं विघट्टं । रटै नाम तो कोटि काटै कसट्टं ॥
षरं षेचरं भूचरं जंच मंचं । जपै व्याधि आसाधि भाजै अनंतं ॥ ३९३ ॥
महादी पुरूषं मचीमा मुरागी । नवं कोंन तो सों निपातिक परारी ॥
गिरा गौरि अधंग कैलास वस्ते । नमस्ते नमस्ते नमस्ते नमस्ते ॥
छं० ॥ ३९४ ॥ रू० ॥ १८५ ॥

साधेंति । व्यंती । यंध्रवं । जखं । अक्षदी । दिखं । सनकादिकं । सपत रिषी । सप्त रिषी । प्रथी-वायगेंनाय तेजं । भांन । मिटैं । नाम । तैा । महा आदि । पुरिषं । पुरुषं । नवों । कोन । तैा । निपातिग । अरधंग । कयल्लास ॥

हमारे जो पाठक ऐसे हैं कि जिनको न तो कभी यह शंका हुई न अब है और न आगे होगी कि हिन्दी भाषा का यह अति प्राचीन महाकाव्य आदि से अंत परियंत जाली बना है उन को उचित है कि यूरोप देश निवासी मिस्टर टॉड, डाकटर हौर्नली, मिस्टर बीम्स और भरतखंड निवासी डाकृर राजेन्द्रलालजी मित्र जैसे महाशयों को अनेक धन्यवाद दें कि उन के शोध और अनेक लेखों के कारण से यह महाकाव्य सर्वसाधारण लोगों के जानने में आ गया नहीं तो कुछ समय और व्यतीत होने पर कोई मनुष्य जैसी कि तर्क वितर्कों से अब दोष देते हैं वैसे ही इस रूपक में "नमस्ते नमस्ते नमस्ते नमस्ते" का पाठ देख करके कदाचित यह अनुमान करलेते कि इस को स्वामी श्रीदयानन्द सरस्वतीजी के सिद्धान्तानुयायी किसी कवि ने झूठा बना दिया है क्योंकि नमस्ते शब्द का प्रचार या तो वैदिक समय में था अथवा इन दिनों में आर्य समाजस्थों में है और आदि के चार रूपकों से चंद के धर्म संबन्धी विचार वैदिक समय के से प्रतीत होते हैं। यद्यपि आज यह महाकाव्य इतना प्रसिद्ध हो गया है परंतु भावी दोष देनेवाले के लिये वह कुछ बाधक नहीं हो सकता क्योंकि जो कुछ प्रमाण इस समय की प्रसिद्धि के उसको उस समय में मिलेंगे उन सब को वह निःशंक होकर वर्तमान समय के दोष देनेवालों की भांति जाली कह सकता है जैसे कि इस समय में सब राजपूताने के राज्यों के प्राचीन संवत इस रासे के ९१ वर्ष के अंतर के संवत के अनुसार मिलते हैं और उन सब को इसी रासा ने अशुद्ध कर दिया यह कहा जाता है। तरह वह भी कह सकता है कि इस समय में जाल ही जाल फैल गया था क्योंकि जैसे आज चंद स्वयम् साक्षी नहीं दे सकता वैसे हम लोग भी उस समय में न होंगे। सारांश यह है कि एक नथा सौ दुःख हरता है और पोथी हठ के आगे किसी की कुछ नहीं बटती ॥

बीसलदेवजी से गोकर्णेश्वर के सिद्ध का उनका नाम ग्रामादि पूछना ॥

दूहा ॥ इति अस्तुति राजन मुषह । पढि पुज्जिव पग वंदि ॥
देषि सिद्ध चकित भयौ । भाजन बुद्धि नरिंदि ॥
छं० ॥ ३९५ ॥ रू० ॥ १८६ ॥ *

कहत सिद्ध किहि पुरहु तैं । कौन गोत किहि नाम ॥
इहि तीरथ आये हुते । कै अगैं कोइ काम ॥
छं० ॥ ३९६ ॥ रू० ॥ १८७ ॥

बीसलदेवजी का अपना नाम गाम आदि बताना ॥

दूहा ॥ पुर अजमेर सु वास हम । गोत ग्याति चहुआन ॥
बीसल दे मो नाम षिध । अयौ करन सनान ॥
छं० ॥ ३९७ ॥ रू० ॥ १८८ ॥

सिद्ध का गोकर्णेश्वर के तीर्थ की महिमा वर्णन करना ॥

अरिल्ल ॥ सिद्ध कहत सुन राजन षत्तिय । जो तू तजि अयौ निज धत्तिय ॥
इह गोपेसुर थान अपूरव । नित प्रति निसा उतरै सो रंभ ॥
छं० ॥ ३९८ ॥ रू० ॥ १८९ ॥

इन थानक चारन वर पाए । तिनके नाम कहू समझाए ॥
भस्माकर रावन मधु कीटक । तिन उपास निराहर षट टक ॥
छं० ॥ ३९९ ॥ रू० ॥ १९० ॥

इहै तिथ की महिमा गाए । धेनु दुगधतैं आनि न्हवाए ॥
जैसैं ध्याए तैसैं पाए । इतनी कहि सिध जडि सिधाए ॥ छं० ॥ ४०० ॥ रू० ॥ १९१ ॥

१८६ पाठान्तर—भो ॥

* यह रूपक सं० १६४७ और १७७० की लिखी पुस्तकों में नहीं है जो इन से भी पुरानी पुस्तकों में यह न मिले तो इस को क्षेपक मानना चाहिये । किन्तु अभी तो हम इस को क्षेपक संज्ञा प्रदान नहीं कर सकते ॥

१८७ पाठान्तर परहुं । तें । क्वौन । नांम । आगें । कांम ॥

१८८ पाठान्तर—नांम । सनांन ॥ बीसल दे शब्द में जो दे है वह देव शब्द का संक्षिप्त रूप है इसी तरह समरसी में सी सिंघ वा सिंह का संक्षिप्त है ॥

१८९ से १९१ पाठान्तर—षत्तीय । इह । धरत्तीय । इहां । गामेसद । थांन । प्रते । थांनक । च्यारन बर । च्यार नर । नांम । उपवास । टंक ॥ ए हैं । धेंनु । तें । आंनि । जेसें । तेसें ॥

बीसलदेवजी का तीन दिन निराहार उपवास कर गोदानादि करना और महादेव का अपछरा के उन्हें उठाने भेजना ॥

दूहा ॥ राजन मन चकित भयौ। सुनि थानक की बिद्धि ॥
जो तो अभि अंतर * बसत। कहि ते तौ सिध सिद्धि ॥
छं० ॥ ४०१ ॥ रू० ॥ १९२ ॥

अरिल्ल ॥ सहस गौ मंगाइ सवच्छिय। देइ द्रव्य लै अच्छी अच्छिय ॥
सहस घट्ट सिव ऊपर कीनौ। तीन उपास नेम तब लीनौ ॥
छं० ॥ ४०२ ॥ रू० ॥ १९३ ॥

तीन दिवस रहै राव निराहर। जल फल तज्यौ पवन कौ आहर ॥
यक निसा इक अपछर आई। सब अपछरा नृत्त करि गाई ॥
छं० ॥ ४०३ ॥ रू० ॥ १९४ ॥

बहुत बेर पीछैं बोल्यौ हर। अपछर जाइ उठेउ वहै नर ॥
हो अपछर नर देषन आई। देषति न्रपति बसि नींदा माही ॥
छं० ॥ ४०४ ॥ रू० ॥ १९५ ॥

अपछरा का बीसलदेवजी को महादेव के प्रसन्न होने और मन की कामना पूरण होने का कहना ॥

दूहा ॥ तुम कौं सिव सु प्रसन्न भय। कह्यौ मोहनि वर मोहि ॥
जाहु थान घरि थान तजि। तूठे संभर तोहि ॥
छं० ॥ ४०५ ॥ रू० ॥ १९६ ॥

तेरे मन की कामना। ऊपर शिव कौ पाइ
इतनी कहि करि मोहनी। दियौ सु न्रपति उठाइ ॥
छं० ॥ ४०६ ॥ रू० ॥ १९७ ॥

---

* चंद की भाषा का व्याकरण तो हम कुछ समय में बनाकर प्रकाश करेंगे परन्तु एक सूत्र उस का यह स्मरण में रखना चाहिये कि उस में घट-भाषा-वत् संधि विकल्प करके होती है। होने के उदाहरण बहुत आवेंगे परन्तु न होने के उदाहरण यह अभि+अंतर और पंचा+अमृत हैं ॥

१९२ पाठान्तर-विधि। जि। तोऊ। तो। सिद्दु। सिध ॥

१९३ से १९५ पाठान्तर-सहस। गऊ। मंगाय। सवछिय। देय। ले। अछीय। घट। शिव। तिन। कौतु। रहै। निशा। एक। आईय। अपछर। नृतत। गाईय। पीछे। बोले। उठाउ। वहे। आइय। देषि नृपति वसिं नीद अमाइय ॥

१९६-९७ पाठान्तर-कों। सें। शिव। हुव। थांन। संभू। को। पाय। दीयो। नृपति। उठाय

बीसलदेवजी का अपने के पूर्ण पुरुषत्व प्राप्त होना देखकर वहां बीसलपुर बसाय महादेव का देवालय बनने का हुकम देना॥

कवित्त॥ पहुर रात पाछिली। राज आए डेरा मधि॥
बढिय काम कामना। भई पुरिषातन की सिधि॥
प्रातकाल करि न्हान। धेन विप्रन कैां दीनी॥
पंचा अख्यत धूप। दीप सिव सेवा कीनी॥
तिहि बार हुकम * देवल करन। पुर † बसाइ बीसल † धरुद्द॥

* यह हिन्दी शब्द **हुकम** अथवा **हुक्कम** संस्कृत शब्द सूक्तम् से बना है॥

† चाहुवान वंश की ख्यातिओं में बीसलदेवजी का उपनाम पुष्यक होना लिखा है और जो आज कल गुजरात में विशल नगर अथवा विसन नगर करके प्रख्यात है वही यह बीसल-पुर बीसलदेवजी का बसाया हुआ है और उसी दिन से बडनगरे नागरें में कि कुछ नागरें की विसननगरा नामक संज्ञा पड़ी है। हमारे इस अनुमान की कविराज श्रीदलपतरामजी सी० आई० ई० अपने ज्ञातिनिबन्ध नामक ग्रंथ में नीचे लिखे प्रमाण से पुष्टि करते हैं–

जे रीते औदिच्यप्रकाश तथा श्रीमाली महात्म्य स्कंध पुराण मां छे, तेमज नागर ब्राह्मणोंनी उत्पत्ति नो ग्रंथ "नागरखंड" नामे घणो मोटो छे, ते पण स्कन्ध पुराण मां छे। ते नागरो नी उत्पत्ति गुजरात मां बडनगर गाम मां थई। पण ते क्यारे थई, तेनो संवत कांई ओ पुस्तक मां लख्यो नथी तेनूं कारण ओज जाणवूं के संवत लखवा थी तथा बनावनार नूं नाम लखवा थी ग्रंथ जूनो केहेवाय नही। पण नागर ब्राह्मणो नो **प्रवराध्याय** नामे ग्रंथ मां जोयो छे तेमां लखे छे के,

श्लोक॥ श्रीमदानंदपुर महास्थानीय पंचदशगुतगोत्राणां।
संवत् २८३ पूर्वेतिष्ठमान गोत्राणां समानप्रवरस्य निबंधः॥

अर्थ॥ शोभायमान ओवा आनंदपुर, मोटास्थानवाला पंदरसे गोत्रोमांथी संवत् २८३ थी पेहेला रहेला गोत्रोना ओकज सरखा नामोवानो निबंध लखूं छूं॥

ओ उपर थी आशरे मालम पडे छे के ओ बखत मां नागरो नी नात बंधाई छे। अने त्यार पछी तेमां थी विसलनगरा नी नात जुदी पडी तेनूं कारण केहे छे के विसलदेव राजाओ विसल नगर बसावीने त्यां जग्न कीधो हतो। त्यारे बडनगर थी केटलाओक नागरो त्यां जोवा गया हता। त्यारे राजाओ तेओ ने दक्षणा आपवा मांडी। त्यारे ओ नागर ब्राह्मणोओ कह्यूं के अमे कोई नी दक्षणा लेता नथी। त्यारे राजाओ कह्यूं के तमने पाननां बीड़ा आपी शूं। ओम कहीने पानना बीड़ा मां गाम नां नाम लखी ने ओ नागर ब्राह्मणों ने आप्यां। त्यारे ते ब्राह्मणो ओ पानना बीड़ां लीधां। तेमां जोयूं त्यारे गामनां नाम लख्या हतां। तेथी पछी ते ओ गाम लेवां कबूल कीधां। ओ बात बड़नगरना नागरोओ जाणी त्यारे तेओ ओ कह्यूं के ओणे राजा नूं दान लीधूं वास्ते ओओ

मंगाइ हस्ति असवार * हुइ। फिस्यौ राज घर आतुरह ॥
छं० ॥ ४०७ ॥ रू० ॥ १९८ ॥

आपणी नातथी बाहर छे। ते दिवस थी विसलनगरानी नात जूदी थई। कोई कहे छे के तेज राजाओ तेज बखतमां साठोद गाम नूं नाम पान मां लखी ने जेने आप्यूं हतूं ने साठोदरा नागर थया। चित्रोड़ लखी ने जेने आप्यूं ते चित्रोड़ा नागर थया। तेमज प्रश्नोरा तथा कृष्णोरा पण थया। ६ प्रकार ना नागरो नां नाम। बडनगरा नागर १ विसल नगरा नागर २ साठोदरा नागर ३ चित्रोडा नागर ४ प्रश्नोरा नागर ५ कृष्णोरा नागर ६॥हवे विचार करो के विसलदेवे विसल नगर सं० ९३६ वी साल मां वसाव्यूं ओ प्रथिराजरासा मां चंद कवियें लखेलूं छे ॥ दोहा ॥ सो संवत नव शत अधिक। वर्ष तीस छह अग्ग ॥ पुर प्रतिष्ट वीसल नृपति। राजत सकले जग्ग ॥ १ ॥ त्यार पछी विसलनगरानी नात बंधाई छे। तेथी साफ जणाय छे के परमेश्वरे कांई नातो बांधी नथी। फकत माणसोओ जुदा जुदा वाडा बांध्या छे। त्यारे ते बंधाया थी हालमां जे हरकतो थती होय ते बंध करवा चहाय तो करी शके खरा। विसल नगराओ राजानूं दान लेवा थी जो बटल्या होय तो हाल मां बडनगराओ मुसलमाननी सेवा करे छे तेओ ओनाथी पण बटल्या कहेवाय। वास्ते ओवो जूठो वेहेम छोड़ी देवो जोइये। अने जरूर समझवूं के तेओ ओक बीजा थी काइ बटलाशे नहीं। इत्यादि ॥ ज्ञाति निबन्ध पृष्ठ ४३ से ४५ तक ॥

नागरखंडना अध्याय २३ पछे तेमां १०८ मा अध्याय थी ४ था अध्याय मां लखे छे के आनर्त्त देशना राजाओ चमत्कारनामे शेहेर वसावी ते ७२ गोत्र ना ब्राह्मणो ने आपवा मांड्यां, तेमा ८ गोत्र-नाओ लीधां नहीं ने ६४ गोत्रनाओ लीधां। पछी त्यां कांई कारण थी नागनी उत्पत्ति घणी थई तेओओ घणां माणसोने करडी खाधां तेथी केटला ब्राह्मणो नाशी छुट्या। पछी ओक अपमान करेले ब्राह्मणे (त्रिजातकें) मन्त्र नो उपाय कर्यो तथा ओ सऊ ब्राह्मणो ओ मलीने लाकड़ी पथरा वगेरे थी हजारो नागने मारी नाख्या त्यारे ओ शेहेरनूं नाम नगर (ओर विनानुं) ठरयूं ने ते ब्राह्मणो नागर कहेवाया। पछी १५८ मां अध्याय मां लखे छे के ओक पुष्पक नामने पुरुषे पर स्त्रीनो संग घणां वर्ष कर्यो, ते पछी पस्तावो करीने तेनूं प्रायश्चित करवा बडनगर मा आव्यो त्यारे सऊ नागरो ओ कह्यूं के ओ पाप मटवानो उपाय नथी। त्यारे ओक चंडशर्मा नामने नागरे कांई प्रायश्चित कराव्यूं, तेथी नागरोओ चंडशर्माने नात बाहर मुक्यो तेथी ब्राह्म नगरानी नात जुदी बन्धाई ॥

पृथ्वीराजरासा मां लख्यूं छेके बीसलनगर बसावनार बीसलदेव राजाओ पुष्कर क्षेत्रमां परस्त्रीनो सङ्ग कर्यो हतो, तेथी ते स्त्रीओ शाप दीधो हतो जे तूं असुर थईश। पछी ओ पाप मटवानो उपाय बीसलदेव शोधतो हतो। मा टे पुष्पक नामनो पुरुष नगर खण्ड मा लख्यो छे ते बीसलदेव सम्भवे छे। ने ब्राह्म नगरा जे लख्या छे ते बीसलनगरा, साठोदरा वगेरे सम्भवे छे इत्यादि० ज्ञात निबंध पृष्ट ७५-७६ ॥

* यह हिन्दी शब्द संस्कृत अश्ववर अथवा अश्व + अर अथवा अश्व +आर से बना है अरबी अथवा फारसी से अनुमान करना व्यर्थ है ॥

१९८ पाठान्तर-पहुर। कामन। हुई। न्हांन। विप्र। कों। वसाय। बीसल पुरह। मंगाय। होइ ॥

बीसलदेवजी का पीछे अजमेर आना और सब कथा प्रसंग पवांर जी राणी से कहना ॥

दूहा ॥ दो दिन के मग एक दिन । आए बीसल गेह ॥
किय प्रवेस न्रप सहर * में । सुचित भये ग्रह मेह ॥
छं० ॥ ४०८ ॥ रू० ॥ १९९ ॥

ऊंच धाम विसराम किय । रंग साल चतुरंग ॥
प्रौढा महल पवार सों । कहिय सु कथा प्रसंग ॥
छं० ॥ ४०९ ॥ रू० ॥ २०० ॥

सब काम-लुब्धाओं को सोच होना कि शंभू ने ऐसा क्या वर दिया ?

चौपाई ॥ काम लुबध बोली सब कामनि । च्यार जाम गई जागत जामिन ॥
सब नारिन कौं सोच उपन्नौ । ऐसौ कहा संभु वर दिन्नौ ॥
छं० ॥ ४१० ॥ रू० ॥ २०१ ॥

बीसलदेवजी का कामान्ध हो अकर्तव्य कर्म करना ॥

कवित्त ॥ राति दिवस एकसी । कान कामना सु बढ्ढिय ॥
प्रौढ मुगध वय वृद्ध । सबैं हर हरि चिय गढ्ढिय ॥
पर घरनी लै बोलि । घरी नह विलँव लगावै ॥
जो विलंब करि रहै । ताहि हनिबे कौं आवै ॥
भै भीत काम बिसराम बिन । नाम सुनत औंढिक परै ॥
अजमेर नैर बीसल न्रपति । प्रमुदा देषत प्रज्जरै ॥
छं० ॥ ४११ ॥ रू० ॥ २०२ ॥

---

* हिन्दी सहर अथवा सहरि शब्द अरबी अथवा फारसी से नहीं है किन्तु संस्कृत स+हलि से ॥ SK. स+हलि=Agriculture, furrows. Hence a place where agriculturists reside. Dwelling &c habitation, &c. The Hindi हर is also from the SK. हल A plough, the earth In the same manner नगर a town is from नग a tree, a mountain & लर off

१९९-२०० पाठान्तर-कै । कैं । सेव ॥ धांम । महिलए । वारि । कौ ।

२०१ पाठान्तर-कांम । युग्म गय । जांम । कों उपंनौ । ऐसैं । सिंभु । दीनौ ॥

२०२ पाठान्तर-कांम । कामना । बढिय तस । सबें । हरत नारी जस । कौं । विलंब । ताहि के पहिले तो विशेष है । भय । कांम । विसदांम । नहि । नाम उन्दकि मरै । नृपति । प्रजरै ॥

दूहा॥ पहन धनकनि देह दुष। ग्रेह कटन ग्रह हथ्थ॥
धरैं धन्न निज वास रुधि। इहै बानि समरथ्थ॥
छं०॥ ४२२॥ रू०॥ २०३॥

कवित्त॥ जिने जाइ इह मान। काम कामना सु बढ्ढिय॥
अवर नाहि उप्परह। बयन म्रष पर चढ्ढिय॥
तिन दिष्षन कर बस्त। मंगि अप्पन मुष अष्षहि॥
अवला संग उल्हास। काहु की कानि न रष्षहि॥
दुज षचि बैस सूद्रह बरन। नजै न किह नक्कन नयन॥
बीसल नरिंद इह भय अकलि। लहै न कहुं निस दिन चयन॥
छं०॥ ४१३॥ रू०॥ २०४॥

बीसलदेवजी के दुराचरणों से दुःखी होकर नगर के लोगों का प्रधान के पास पुकारने जाना॥

दूहा॥ दीरघ जन मिल्ल नयर के। गए द्वार परधान॥
बढि अचैन नर नारि सब। नहीं रहै रजधान॥
छं०॥ ४१४॥ रू०॥ २०५॥

२०३ पाठान्तर-धनकन। मुष। ग्रिह। कट्टन। हथ। निसि। वांनि। समरथ।

२०४ पाठान्तर-मांन। कांम। कांमना। बढ्ढय। उपहर। चढय। दिषत। मुष्य। संग कांक कांणि। रषहि। चीय। वईस। किहि। इहै। लहैं। निसि॥

हमारे पाठकों में से जो ऐसे हैं कि वे Political officers रहे हैं अथवा जिन्होंने बीसल देवजीकी जैसी अनीतियोंके वृत्त गोप्य Political Reports में पढ़े हैं अथवा जो Mysteries of the Native Courts के ज्ञाता हैं अथवा जिन्हों ने वाजिदअली शाह की सायरी का पूरा ज्ञान उपार्जन किया है; वे चन्द के लिखे बीसलदेवजी के वृत्तान्त पर अविश्वास नहीं करेंगे और न उसे अत्यन्ताभाव का समझेंगे किन्तु कवि के स्पष्ट-वक्तृत्व की प्रशंसा करेंगे। इतिहास लिखनेवाले का यह मुख्य काम है कि वह चाल चलन के विषय में स्पष्ट वृत्त लिखे कि जिस से उस की भावी संतान शिक्षा ग्रहण करें। हमारे इस देश में हम लोग इस बात को फांसी लगने जैसा अपराध समझते हैं और रात्रि दिन ऐसी ही अनीतियों में लगे रहते हैं अतएव पुरुषार्थ का बड़ा टोटा हमारे यहां आ गया है!!!

२०५ पाठान्तर-मिलि। कै। परधांन। बढिं। अचैंन। नही। रहसि। रजधांन। रिसांन॥

सब का आपस में सलाह करके बीसलदेवजी को राजधर्म अरज करना ॥

कवित्त ॥ तिन मति तिहिं पुर होइ । लोइ मति समथ समंडव ॥
बहुत भूमि भूमियां । चढवि तिन छर पुर षंडव ॥
इह सु ध्रम्म राजेन्द्र । दुष्ट कंकट सिर वहै ॥
अनड अनड संहरै । धरा रष्षन धर अहै ॥
इह कह्यौ मंत तिन मंचियन । अह सब सहर सु पंच जन ॥
इह कथिय बत्त न्रिप सम तिनह । दवरि विसेषक भूमि यन ॥
छं० ॥ ४१५ ॥ रू० ॥ २०६

बीसलदेवजी ने उत्तर दे कहा कि यह सब मैं जानता हूं पर काम ज्वाला के बढ़ने से मैं लाचार हूं अब तुम जो कहोगे वह करूंगा ॥

कवित्त ॥ दुज्जर काय सु कहत । राज मन मांहि समझ्झौं ॥
काम ज्वाल मो बढिय । तुम हि तिन कै दुष दझ्झौं ॥
हौं इह जानौं सबै । पै मुहि मन वसि न होई ॥
सदा पहर जिम छांह । रहै कूई की कूई ॥
तुम कहौ सु हौं करि हौं अवसि । बोलि लेहि किरपाल हौं ॥
जहँ जहां दिसा तुम संचरौ । तहँ तहँ आऊं चढ्ढि हौं ॥
छं० ॥ ४१६ ॥ रू० ॥ २०७ ॥

इस पर बीसलदेवजी का किरपाल को बुलाना और उसका आना ॥

दूहा ॥ दै फुरमान* प्रधानं तब । बुल्लाये किरपाल ॥

२०६ पाठान्तर-मत्तिह । समथ्थ । संडव । भूमीयां । ध्रंम । कहे । अनउ अनड । रषन । कहिय । तिनहि । विशेषक । भुंमियन ॥

२०७ पाठान्तर-दुजर केत । समझो । कांम । बढीय । कै । दझों । हों । जांनौं । सबैं । पैं । मोहि । छांह । हों । कू । तहां तहां । चढि । हूं ॥

* यह हिन्दी शब्द संस्कृत स्फुर+मान से है जैसे कि स्फूर्तिमान्, स्फूर्त्तमता और स्फूर्तिमत् इत्यादि । इस फुरमान अथवा फुरमाना आदि शब्दों का प्रचार राजस्थानों अथवा बड़े प्रतिष्ठित लोगों की मंडली में आज भी बहुत है । वास्तव में यह उस कहने अथवा आज्ञा के अर्थ में

संभरि सैां आयैा सद्दर। लियै अनूप रसाल ॥

छं० ॥ ४१७ ॥ रू० ॥ २०८ ॥

बीसलदेवजी का किरपाल को कहना कि तरवारि की पृथ्वी है सो हम नव खंड की षड्ग खोसने को षड्ग बांधते हैं तुम खजाना संग ले बीसल सरवर पर डेरा करो ॥

कवित्त ॥ आय नवै किरपाल। पाइ राजन कै लग्गैा ॥
मुह अग्गैं दुअ पग्ग। धरै नग जरित उनग्गैा ॥
बंधिय तेग विचार। सु गुन राजन इह कथ्थिय
जिम जिम विद्या दान। तिमह तिम षगकी प्रथ्थिय ॥
इहै सगुन हम कैां भयैा। षग षेसैां नव षंड धर ॥
ब्रह्मांड मंड सब बसि करैां। मंडैां मेर सुमेर धर ॥

छं० ॥ ४१८ ॥ रू० ॥ २०९ ॥

दूहा ॥ सुनि क्रिपाल मो मुष वचन। कढि षजीन सँग लेहु ॥
बीसल सरवर ऊपरैं। ध्रुव दिसि डेरा देहु ॥

छं० ॥ ४१९ ॥ रू० ॥ २१० ॥

प्रयोग होता है कि जो किसी के द्वारा कहा जाय अथवा आज्ञा किया जाय। जैसे हमारे रज-वाड़ों में जहां अभी प्राचीन देशी रीति प्रचलित है वहां जिससे राजा स्वयम् नहीं बोलते। तब राजा जी तो किसी अन्य पुरुष को कहते जाते हैं और वह पुरुष उस इष्ट मनुष्य को कहता जाता है। तथा किसी अपने से छोटे अथवा आधीन को कागद पत्र के द्वारा कहा अथवा आज्ञा किया जाय उसको फुरमान वा फुरमाना कहते हैं

२०८ पाठान्तर-फुरमांन। प्रधांन। बिल्लाये। बुलाए। सो। अमूप ॥

२०९ पाठान्तर-पाय। आगे। दुय। धरे। उनग्गो। सगुन। कथिय। दानं। तेम षग की दईं पृथ्वीय। इह सगुन अवैं हमकों भए। सों व्रह्म मंड मंड। व्रह मंड मंड। कयो। दंडों ॥

* हिन्दी में खजाना और उस से बने शब्द आते हैं उस का वाचक यह प्राचीन हिन्दी शब्द सब के ध्यान में रहने योग्य है। यह संस्कृत खज्जूर रौप्य silver का अपभ्रंश है। इन शब्दों को अरबी और फारसी के अभ्रंश अनुमान करना व्यर्थ है। देखो, सं० खज शब्द भी युद्ध और स्वार्थ के अर्थों में प्रयोग होता है। और वह भी इतने प्राचीन समय से कि ऋग्वेद ८। १० में "अलर्षि युध्म खजकृत पुरन्दर०" कहा है ॥

पाठान्तर-क्रिपाल। संग। उपरें। उपरैं। द्रु। दिशि ॥

बीसल सरवर पर बीसलदेवजी के आधीन तथा सहायक इष्ट मित्र राजाओं का उनके दिग्विजयार्थ अटन के लिये एकत्र होना और गुजरात के चालुक्क राजा का वहां न आना अतएव बीसलदेवजी का उस पर चढ़ाई करना और वालुका राय का यह सुनकर सामना करने को आना ॥

पद्धरी ॥ भरि चले सुतर*रथ एक राह । बीसल्ल तडाग दिय वारि गाह ॥
फुरमान दए लिषि दस दिसान । सब आय मिले अजमेर थान ॥ छं०॥४२०॥
परिहार मह्नसी मिल्यौ आय । मंडोवर के नर लगे पाय ॥
गहिलौत मिले सब सभा मैार । पावासर तोंवर राम गौर ॥ छं० ॥ ४२१ ॥
मेवात धनी आए महेस । मोहिल्ल दुनांपुर दिए पेस ॥
बल्लोच मिले सब पाइ बंधि । बांभन्या न्टपति तुजि गए संधिं ॥ छं० ॥ ४२२
भटनेर राय की आइ भेट । मुल्तांन नाल बँध थटा थेट ॥
फुरमान गए जैसल्लमेर । भेम्या सब भाटी भये जेर* ॥ छं० ॥ ४२३ ॥
जादौं रु वघेला मल्हवास । मोरी बड गूजर आइ पास ॥
अंतरहवेध कूरंभ आइ । सब मेर जेर होय लगे पाइ ॥ छं० ॥ ४२४ ॥
आए सपाइ चढि जैतसीह । तक्षिनपुर के नर संग लीह ॥
आये सु चढ्ढि उदया पवार । निरवान डोड चढि चले जौर ॥ छं० ॥ ४२५ ॥
चंदेल दाहिमा चरन लग्गि । वसि किये भूमिया भूनि षग्ग ॥
चालुक्क कोइ आयौ न पाइ । रहे मुकरि जौर *तरवार* साहि ॥ छं० ॥४२६॥
सुनि बोल जैतसी गोलवास । घर बार नगर को रष्षपास ॥
सौं पौं सु तुमहि अजमेर थान । वालुक्क कितक पावै न जांन॥ छं० ॥ ४२७ ॥
दर* कूच कूच* चढि चल्यौ बीर । गिरि मग्ग होइ सर सुक्कि नीर ॥

* इस रूपक में के कई एक शब्द भाषा के शोधक विद्वानों के ध्यान में लेने योग्य हैं जैसे-हि० सुतर (SK. सु + तर or तरि तरु), जेर (SK जूर) or जूरी to reduced, to injure, to hurt, to decay, to grow old, to wound or kill) जोर (SK. जुड to bind, to join, as in making or mending, to direct, to grind or pound &c., or जुर speed, velocity, motion in general)· तरवार (SK. तरवारि) दर (SK. दृ to divide, cut or break, to preserve, &c., aud aff अप्) कूंच or कूच (SK. कुञ्च to go, to go to or towards,)

इस के अतिरिक्त यह भी पाठकों को ज्ञात हो कि इस प्रसंग में कहीं चालुक और कहीं बालुक पाठ है सो जहां जैसा पुस्तकों में मिला वैसा रक्खा गया है किन्तु जितनी पुस्तक जतियों

सोझति सोलं की पच्छिलि चोट। सैं लोट किये धर पारि कोट ॥ छं० ॥ ४२८
जारौर भंजि गढ रौर पार। अरि माजि म० गिर बन मझार ॥
आबू चढि भेट्यो अ उलेस। तत्काल लियौ गिरिनारि देस ॥ छं० ॥ ४२९ ॥
वागरि सोरठ कपना सुद्ध। दंड मानि मिले नह मिले जुद्ध ॥
गुजरात देस मित्तर हजार। बालुका राइ चालुक झुझार ॥ छं० ॥ ४३० ॥
सुनि बत्त चढ्यो अहंकार बंध। शिव सकति पूजि धरि कुन्त कंध ॥
असवार लार हज्जार तीस। मद झरत नाग पंचास वीस ॥ छं० ॥ ४३१ ॥
जोजनह एक पर करि मिलान। आवाज सुनिय तब चाहुवान ॥
छं० ॥ ४३२ ॥ रू० ॥ २११ ॥

बालुकराव का आना सुनकर बीसलदेवजी का सेना ले चढ़ना ॥

दूहा ॥ सुनि अवाज बीसल नृपति। आयौ बालुक राव ॥
राज मंगि है वर चढ्यौ। दियौ निसान * निघाव ॥
छं० ॥ ४३३ ॥ रू० ॥ २१२ ॥

पद्धरी ॥ दल चढ्यौ साजि बीसल सु राज। बज्जिय सु जांनि अरि पुर अवाज ॥
सित्तर हजार सेना सु काज। झिंगरि सलूर पावस निगाज ॥ छं० ॥ ४३४ ॥

की लिखी हुई हैं उनमें च और ब में बहुत ही कम फरक देखने में आया है कि जिस से मैं अनुमान करता हूं कि लेखकों ने धोका खाकर चालुक्त का बालुक्त पाठ न लिख दिया हो ॥

* हिं० निशान अथवा निसान (S K. नि+शाशा i. e. नि before and शाशा coarse cloth, sack cloth, Canvas. A small tent or screen used especially as a retiring room for actors and tumblers, &c.) Hence a standard, an ensign, flag, banner & colours, &c. इस निशान शब्द का प्राचीन देशी राज्यो में अभो तक प्रचार है और troop और Company के अर्थ में भी प्रयोग होता है जैसे अमुक राजा ने अपने अमुक सरदार पर दो निशान चढ़ा दिये। अमुक अमुक निशानो में झगड़ा वा लड़ाई हो गई। मैं अमुक निशान का हूं और वह अमुक का ॥

२१ पाठान्तर-दीप। फुरमांन। दिसांन। थांन। आई। गहिलोत। पावांसर। तूअर। मोहिल। बलोच। बंभन्या। सिंध। आय। बंध। फुरमान। जेसलहमेर। जदो। मल्हनवास। आय। अंतरहबंध। आय। पाय। सपाय। जैतसिह। तक्किपु। साथ। सथ। सथ्या। लीय। चठि। पवांर। निरवांन। भूमिया। मुसकरि। रखवाल। सोपोर्स। थांन। कहांक। कितहु। जांन। कूच कुच। मग्गि। सोझत्ति। सोकत्ति। सोलंकि। सें। जालौर। पारि। मझारि। लीयौ। कपंन। डंड। सत्तरि। राय। कूंत। पचास। जोजन। मिलान। चाहुवांन ॥

२१२ पाठान्तर-आवाज। मंग। हैवर। चढ्यौ। दीयौ। निसान। न। घाव ॥

२१३ पाठान्तर जान। सत्तरि। बाजी। झिंगर। कि गाज। ठलकंति। कूंत। जुत। जंतु। सिष। पष्षर। बधि। भूमिया। मंडि। सं० १६४० और १७७० में "करि अगम गम्य दल अट्टल रक" है। जब। ऊजलो। उज्जलो पदक। मुकाम। मुक्कांम। गाम।

ढलकंत ढाल झलकंत कुंत। बिकसंत सूर सकसंत जंत ॥
हल हलत सिंधु वर चल अनूप। झल मलत सिष्य पष्षर सनूप ॥ छं० ॥ ४३५ ॥
बर विजय बड्डि चालुक्क देश। बहु मिलत भूमियां लेय पेस ॥*
अरि गहत गाढ तिन धरनि षंड। इहि रीत राज बसु विजय मंड ॥ छं० ४३६ ॥
करि अग्ग मद्द गल सहस इष्य। बर माघ मास उज्वलौ पष्य ॥
दस कोस जाय मुक्काम † कीन। बिच गाम नगर पुर लूट लीन ॥
छं० ॥ ४३७ ॥ रू० ॥ २१३ ॥

बीसलदेवजी की खबर सुन बालुका राव का जलभुन जाना ॥

दूहा ॥ सुनिय षबरि ‡ बालुक नवै। तमकि सु जयौ ताम ॥
मानों प्राजारिय अगिन। नर निरधूम बिराम ॥
छं० ॥ ४३८ ॥ रू० ॥ २१४ ॥

बालुका राव का नित्य नेम करके लड़ने के तयार होना ॥

पद्धरी ॥ बालुका राइ चालुक्क वीर। संगाइ नीर मंज्यौ सरीर ॥
हरि चरन अंब अंजुली कीन। परि कंठ विष्य धारिय कुलीन ॥ छं० ॥ ४३९ ॥
जुध आज करौं कहि कहा कानि। जो जाउँ भज्जि तौ गोत गानि ॥
इतनी भूमि षिची न कोइ। अडौं न फिरयौ मिल्लि लेय लोह ॥ छं० ॥ ४४० ॥
पषरैत तुरिय पषरैत गज्ज। नर कस्से वगतर सिलह सज्जि ॥
असवर भये तब षबरि दीय। बालुका राइ अयौ अबीह ॥ छं० ॥ ४४१ ॥

---

* हिं० पेस (SK. प्रैष्य m. A servant, a slave. n. Service, servitude. Hence a tribute or present such as is only presented to conquerors, princes, great men and superiors.)

हिं० पेश अथवा पेस+कशी अथवा कसी (SK. प्रैष्य and कृष=to draw, to draw out or off, to atrract, to raise, to draw up, &c.)

† हिं० मुक्काम or मुकाम (SK. मुक्त+काम=परिश्रम labour). Hence a halt, a stop in a march, &c. Some think it from the SK. मकुष्ट mfn. going lazily, slowly, &c. or SK. मक्क or मक्कि or मुक्क to go, to move, &c, & आमनि a road or SK. मुक्त+आम to go.

‡ हिं० खबरि or खबर (SK. ख्या to relate, to recount, to say or tell, celebrate, to make known &c.

२१४ पाठान्तर-षब्बरि। अमि। तांम। सं० १८५९ की में "मनों प्रजारिय अगनि बन" ॥ बिराम ॥

बालुका राव का बीसलदेवजी के पास श्रीकंठ भट्ट को भेज संदेसा कहना ॥

श्रीकंठ भट्ट चहुवान पास । तुम जाय कहौ इहि विधि प्रकास ॥
श्रीकंठ भट्ट गय अरि सु थान । बीसलदे भेट्यौ चाहुवान ॥ छं० ॥ ४४२ ॥
आसीस दई उभ्भारि हथ्थ । बालुका राइ की कही कथ्थ ॥
जितनैं न्रपति सौं सुहै काम । तितनैं रयति सौं कौन काम ॥ छं० ॥ ४४३ ॥
तुम बुरी करी करि रयति बंदि । अैसी न करैं हिंदू नरिंद ॥
अब छंडि रयति फिरि जाहु धाम । अजमेर सहर मंडौ विस्राम ॥ छं० ॥ ४४४ ॥
हौं वह्म राय जुध करन जोग । जुध भाजि जाउ तौ परै सोग ॥
हम मरन दिवस है मंगलीक । मो पास जिते न्रप सुद्ध लीक ॥ छं० ॥ ४४५ ॥
हम तुम्म नहीं कबहू विरुद्ध । इह जानि जाहु फिरि तजौ जुद्ध ॥
हम तुम्म काम इहि षेत आज । को रहै षेत को जाइ भाजि ॥ छं० ॥ ४४६ ॥

यह सुनते ही बीसलदेवजी का लड़ने को आज्ञा देना ॥

इतनी जु सुनत ही चाहुवान । तिहि वार हुकम करि द्यौ निसान ॥
पषरैत किये है वर मतंग । संनाह पहरि सब नरनि अंग ॥ छं० ॥ ४४७ ॥
दोउ फौज निजर दिठाल भिल्लि । उपट्टै सिंधु जनु लहरि जल्लि ॥
छं० ॥ ४४८ ॥ रू० ॥ २१५ ॥

बीसलदेवजी का चक्रव्यूह और बालुकराय का अहिव्यूह रचना ॥

दूहा ॥ चक्रव्यूह चहुवान किय । अहि मन बालुक राइ ।
कै भेदै कै मधि रहै । दई करय निरवाह ॥
छं० ॥ ४४९ ॥ रू० ॥ २१६ ॥

२१५ पाठान्तर-राव । चालुक । मंगाय । मभ्यौ । अंजुलि । धारीय । जुद्ध । करों । काल्हि । काल । जौं । जाउं । जाऊं । भजि । गोतमालि । काय । अड़ो । फिर । पषरैं । पषरैंत । गज । कसे । सजि । भए । जाहुं । कहो । थांन । सं.१७७० में "भेट्यो बीसलदे चाहुवान" । दीन । दइ । उभारि । हथ । राय । कथ । जितनैं । सों । कांम । तितनें । सों । कोंम । कांम । बुरीय । करी । करै । हिदू । धांम । विश्रांम । हों । ब्रह्म वंस । भागि । जाऊं । पासि । शुद्ध । तुम । तुंम । नही । बिरुध । तुंम । कांम । जाय । चाहुवांन । निसांन । हैंवर । हैं वार । दोऊ ।
२१६ पाठान्तर-चाहुवांन । वालुका । राय । दइ ।

बीसलदेवजी और बालुकराय की फौजों का परस्पर युद्ध करना ॥

भुजंगी ॥ मिले प्रात कालं दुअं दिष्ट फौजं । मनों देषिअै जानि सामुद्र मौजं ॥
गजं आय झूमे भले सात रोटं । षई षंड सुंडं करे अप्प चोटं ॥ छं० ॥ ४५० ॥
भई तीरकारी छुटे नाल बानं । परी सोर की धुंध सुझ्झै न भानं ॥
भले सूर बीरं धरैं कुंत कंद्धं । उपारैं तुरी दो दिसा फौज मद्धं ॥ छं० ॥ ४५१ ॥
निसंकं तुरी थप्पि पषरेत नष्षै । मनों बुंद सिंधं परे कौन दिष्षै ॥
भए एकमेकं परे भार भारे । तनं तेग तुट्टे बचे फूल धारै ॥ छं० ॥ ४५२ ॥
भई फौज चालुक्क की पच्छ पायं । तबै बालुका राइ कीनी सहायं ॥
जपै भाय भायं करै मार मारं । लरै दोय जोधा कटैं सार सारं ॥ छं० ॥ ४५३ ॥
उपट्टै घटैं गाबरं तुंड तुट्टै । बचे संग कुट्टी फिरी अंग फुट्टै ॥
चपे चक्रव्यूहं न्टपं अप्प चल्लै । फिरैं मुष्य परिहार गहिलौत मिल्लै ॥ छं० ॥ ४५४ ॥
चल्यौ भज्जि गहिलोत तूंवर दिसानं । फटे चक्रव्यूहं भए एक थानं ॥
तिनं बार स्याबासि पावासु रानं । सनं मुष्य धाए मनों सिंघ जानं ॥ छं० ॥ ४५५ ॥
परी भूमि लोथं मिले हथ्थ बथ्थं । करैं जोर जोधा अकथ्थं सु कथ्थं ॥
तिनं बार पंधार पेले वलोचं । जुरे आय संमुष्य कीयौ न सोचं ॥ छं० ॥ ४५६ ॥
भभक्कं भकं हस्ति बोले भसुंडं । परे षंड षंडं रनं रुंड मुंडं ॥
बने लाल बागे झिले लोह मिल्लै । दुहू ओर जोधा मनौं फाग षिल्लै ॥ छं० ॥ ४५७ ॥
गनं श्रोन चल्लै रजं आस पासं । मनौं माधुरी मासं फूले पलासं ॥
मिली दिष्ट चालुक्क बीसल नरिंदं । मनौ सूर दूषे भये चंद्र मंदं ॥ छं० ॥ ४५८ ॥
तुरी चढ्ढि चालुक्क हस्ती चुहानं । भयौ राज सौं जुद्ध भारी भयानं ॥
उनें बाजि नंष्यौ इनें गज्ज पेल्यौ । दिए दंत पायं दुअं लोह मिल्यौ ॥ छं० ॥ ४५९ ॥
फिस्यौ गज्जराजं उनें बाजि फेस्यौ । दुअं बीर बाचा भई षेत हेस्यौ ॥
छं० ॥ ४६० ॥ रू० ॥ २१७ ॥

२१७ पाठान्तर-दुयं । दिठ । देषियैं । चैन । जांनि । झूमे । रोटं । रोट्टं । सपे । सौटं । सोट्टं । धुंधु । सुझै । भांन । शूर । धरें । कंधं । उपारै । मंधं । षप्परे । कंध नषे । नष्पै । परें । कोंन । भई । पछ पाई । पछ । राय । सहाई । जपे । भाई भाई । जोद्धा । कटै । घटं । तुंअ । करी । चंपे । अप । चलं । फिरैं । मुदैव । मिलं । भजि । तोंवर । फटै । मुष । पुहवि । पहुमि । हथ बथं । करे । अकथं । कथं । पेल्यो । सनमुष । भभकंत हस्ती सु बोले भुसुंड । रुड । मुडं । मिले । दुहुं । मनों । षिले । चल्ले । रजे । मनैा । बालुक । मनो । दूषे । हुवं । चंद । चढि । चालुकं । करी । चाहुवानं । चौहानं । सों । नष्यो । गज । दए । दुवं । गजराजं । दुहूं । भयं ॥

चालुक का कहना कि रात में युद्ध नहीं करना प्रात हुए युद्ध करेंगे ॥

दूहा ॥ राज सुनैा चालुक कहै। है थप्परि दृह कंध ॥
रात्ति परी जुध नहि करैं। प्रात करैं फिर जुड्ड ॥
छं० ॥ ४६१ ॥ रू० ॥ २१८ ॥

दोनों योद्धाओं का अपने अपने डेरों पर आना और चालुक के मंत्रियों का एक झूठी पत्री बनाना ॥

अरिल्ल ॥ अपने अपने डेरा आए। सब घायल के घाव बँधाए ॥
मिले सकल चालुक के मंत्रिय। झूठी एक बनाई पत्रिय ॥
छं० ॥ ४६२ ॥ रू० ॥ २१९ ॥

चालुक के मंत्रियों का उसे एक झूठी पत्री देकर घर भेज देना ॥

अरिल्ल ॥ सो कर जाइ राज कै दिन्निय। तुम घर जाहु कहा बंक थन्निय ॥
डोली करि चालुक्क चलाए। सब मंत्री मिलबे कैां आए ॥
छं० ॥ ४६३ ॥ रू० ॥ २२० ॥

चालुक के मंत्रियों का बीसलदेवजी के मंत्रियों से मिल संधि कर लेना ॥

अरिल्ल ॥ सब मंत्री परधान थान पर। बोलि लए पावासर तोंअर ॥ *
हम सु तुम्हारैं इनप आए। कपट निपट करि राव चलाए ॥
छं० ॥ ४६४ ॥ रू० ॥ २२१ ॥
दृह सु बोल गज तोल चलावैा। राज कहै सो माल मँगावैा ॥
छं ॥ ४६५ ॥ रू० ॥ २२२ ॥

---

२१८ पाठान्तर-करें। करै। भये। करै ॥

२१९-२२ पाठान्तर-अपनें २। घाउं। बंधाए। मंत्री। पत्री ॥ २१९ ॥ जाय। दीनीय। थंनिय। चालुक। करी। कें। कूं। आये ॥ २२० ॥ परधांन। थांन। तुम्हारे। पायन ॥ २२१ ॥ इहां। सोल। चलायैा। मंगायैा। तहं ॥ २२२ ॥

* यह तुक सं० १६४७ और १७७० की पुस्तकों में नहीं है ॥

पावासुर का बीसलदेवजी को संधिकर लेने के समाचार कहना ॥

अरिल्ल ॥ राजन पास गए पावासुर । तहाँ बोलि किरपाल लए नर ॥
चालुक के मंत्री आये मिल । मंगो माल धरै प्रभु पग तल ॥
छं० ॥ ४६६ ॥ रू० ॥ २२३

बीसलदेवजी का संधि स्वीकार कर वहां महल बनाने और नगर बसाने को कहना ॥

अरिल्ल ॥ फिर राजन्न कही तुम जानौ । मेरो इहाँ महल्ल हु थानौ ॥
एक मास में नगर बसावौ । इतनी कहि अरु पाइन आवौ ॥
छं० ॥ ४६७ ॥ रू० ॥ २२४ ॥

माल मँगाकर बीसलपुर बसाना और वहां से पीछे फिरना ॥

दूहा ॥ पावासर तोंअर कहे । भरें कोरि कै भाँग ॥
जब हो माल मँगाइ करि । नगर बसावन लाग ॥
छं० ॥ ४६८ ॥ रू० ॥ २२५ ॥

जीति षेत चहुआन न्टप । चालुक धाय अघाय ॥
फिरि बाहुरि बीसल चल्यौ । बीसल्ल नगर बसाय ॥
छं० ॥ ४६९ ॥ रू० ॥ २२६ ॥

सो संवत नव सत्त अध । बरस तीस कछ अग्ग ॥
पुर पट्टन बीसल न्टपति । राजत सयलह जग्ग ॥*
छं० ॥ ४७० ॥ रू० ॥ २२७ ॥

२२३–२२४ पाठान्तर –कें । कै । पाइन । ताले ॥ २२३ ॥ राजन । राजंव । जानौ । इहं । मेंल्हिहू । हों । मैं । बसायौ । बसाउ । पायना आयौ ॥ २२४ ॥

२२५–२२७ पाठान्तर–कहै । भरँ । भरें । मंगाय । बसाउन ॥ २२५ ॥ जीती । चहुआंन । चहुवान । त्रप । घाय । फिरिं ॥ २२६ ॥ सत । अध । अग्गि । जग्गि ॥ २२७ ॥

* इस रूपक में कहे संवत् के विषय में हमारी टिप्पणी १६८ पढ़ो और विचार करो । इस ग्रंथ के रूपक १६८ में बीसलदेवजी के पाट बैठने का संवत् ८२१ कहा है परंतु ख्यातियों में सं० ९३१ भी मिलता है । उन के राज्य करने के वर्ष ६४ कवि ने बताये दिए हैं अतएव यह रूपक पाट बैठने के रूपक १६८ में **आठ सैं** के स्थान में **नौ सैं** अथवा **नव सैं** का पाठ होना स्वयम् सिद्ध करता है क्योंकि जो ऐसा न माने तो । ११८ वर्ष का राज्य समय होगा । ख्याति में लिखे बीसलदेवजी के पाट बैठने के संवत् के अनुसार जो लेखा लगाकर हमने टिप्पणी १६८ में संवत् १०८६ सिद्ध किया है वही कर्नैल टोड साहब भी नीचे लिखे प्रमाण से अनुमान करते हैं:–

एक दूती का बीसलदेवजी के एक बहुत सुन्दर बनिकसुता की खबर देना ॥

दूहा ॥ बनिक सुता कैामारिका । एक अनूप नरिंद ॥
कामलता दूती कहै । मनों सरद कै चंद ॥
छं० ॥ ४७१ ॥ रू० ॥ २२८ ॥

बीसलदेवजी का बीसलपुर में प्रविष्ट होना ॥

कवित्त ॥ संवत नव सत अड्ड । बरष दस तीय सत्त अग ॥
पुर प्रविष्ट बीसल्ल नरिंद । राजंत सयल जग ॥
तिहि पट्टन इक बनिक । मंडि ग्रह राज बिवाहति ॥
रचित्र देव न्रप सबद । दिष्षि तिय देव इवाहति ॥
जै जै सबद बंदिन चवहि । माग.ध पुच पविच मति ॥
अन धन प्रवाह बहु पुहवि परि । बरष्यौ जेम पुरंद गति ।
छं० ॥ ४७२ ॥ रू० ॥ २२९ ॥

---

c " Mahmood's final retreat from India by Sindh to avoid the armies collected "by Byramdeo and the prince of Ajmere," to oppose him, was in A. H. 417, A. D. 1026, or S. 1082, nearly the same date as that assigned by Chund, S. 1086," Vol. II, page 419.

इस के सिवाय पाठकों को यह भी विचार करना होगा कि इस समय गुजरात देश के पट्टन का चालुक राजा कौन सा था कि जिससे बीसलदेवजी का युद्ध हुआ । अतएव हम जैन ग्रंथ प्रबंध चिन्तामणि और कुमारपाल चरित्र आदिक के अनुसार शोध हुए संवत् मूलराजजी सोलंकी से लेकर करण तक के नीचे लिखते हैं:—

१ मूलराज	=	संवत् ९९८ से	५५	वर्ष	राज किया
२ चामुंडराय	=	,, १०५३ से	१३	वर्ष	,, ,,
३ वल्लभराज	=	,, १०६६ से	११॥ मांस	६	दिन राज किया
४ दुल्लंभराज	=	,, १०६६ से	११॥	वर्ष	राज किया
५ भीम	=	,, १०७८ से	५०	वर्ष	,, ,,
६ करण	=	,, ११२८ से	३२	वर्ष	,, ,,

२२८ पाठान्तर—कोमारिका । कहै । मनहुत ॥

२२९ पाठान्तर—सं० १७७० की पुस्तक में "सर संवत् नव सत्त । बरष दस पंच सत्त अग" पाठ है । बीसल्ल । नृपति । राज्यंत । तिन । पट्टन । ग्रह । दिषि । तीय । इवाहि । पुत्त । पहु । पुहमि । पद । पुरिंद ॥

इस रूपक के संवत् के विषय में टिप्पण १६८ और २२५—२८ और बीसल नगर अथवा बीसलपुर के विषय में टिप्पण १८० और १८२ अवलोकन करो ॥

बीसलदेवजी का पीछे अजमेर आना और वहां उन का हास होना ॥

दूहा ॥ इह विधि मंड्यौ राज वरि। जग्य बनिक्क अजमेर ॥
बरष चयोदस मद्धि वय। भयौ हास सब नैर ॥
छं० ॥ ४७३ ॥ रू० ॥ २३० ॥

बनिकसुना गौरी का पुष्कर में तप करना और बीसलदेवजी का उस पर मोहित होना ॥

पद्धरी ॥ आषाढ मास उज्जास पष्य। दिन तीय सोम बंदन सरुष्य ॥
मटिवाय गज्जि नीसांन गेन। अति उंचि मंडि न्रिप अवधि अेन ॥ छं० ॥ ४७४ ॥
किल्लकंत उबल अकाल अभ्भ। विथुर्यौ मद्धि जल पहुमि गभ्भ ॥
बिलसंत राज तिय देव साय। निकसै बार कछु एक भाय ॥ छं० ॥ ४७५ ॥
चिहुं कोद घूंमि घन पुब्ब पूर। दिन पांच अनि दरसाइ सूर ॥
रस बार सोम वीरंभ दिन्न। ते वंस सेव जन बंद किन्न ॥ छं० ॥ ४७६ ॥
सो षंड मास लगि रत स मान। घर हरे धुंम जल मद्दिर आन ॥
छं० ॥ ४७७ ॥ रू० २३१ ॥

साटक ॥ स्यामंग रवरंग अंग रवनी। अन्नी सु रंगेसवे ॥
साहंसं सक पाइ राइ मुगता। जुग्ता सरित्तारएं ॥
नीलं वास वनूर बंध विधना। हरि हार धारां तनं ॥
भूमिं संकि स्वधीन पुन्य तनयं। देवा रहस्यं मनं ॥
छं० ॥ ४७८ ॥ रू० ॥ २३२ ॥

कवित्त ॥ धरतिय हरि उर वास। बास धर उर तिय धारिय ॥
दिग कज्जल लगि धार। धार कज्जल दिग धारिय ॥

---

२३० पाठान्तर-परि। मधि ॥

२३१ पाठान्तर-उजास। पष। सरुष्य। सरुष। मिटिंवाय। गज। नीसांन। गेंन। उंच। वेन। उपिल। अभ। विथूर्यौ। मधि। पुहमि। गभ। निकसै। चिहुं। घुंमि। पुब। पंच। दरसाई। विरंभ। दिन। तें। बंध। किन। स नाभ। आभ।

२३२ पाठान्तर-स्यामांगं। अवनी। पाय। जुगता। सरितारए। बिधिना। हार। भूमि ॥

२३३ पाठान्तर-धरतिय उर। धारि। मधि। हिय। रंगिय। नूपर। सा। पुहुप। पहुप। रहस्सि ॥

रच्यौ हार हिय मद्धि। मद्धि हिय हार सु रंमिय॥
नूपुर पय सो श्रवन। श्रवन नूपुर पय अंगिय॥
अविसय न पुहप छन बन रसिय। रसय बनी घन पुष्फ सम॥
भू इंद रहसि रसि बंछि रंमिय। बीसल रस भू इंद रम॥

छं०॥ ४७९॥ रू०॥ २३३॥

पुष्कर की तपस्वनी की बीसलदेवजी के प्रति अरदासि॥

दूहा॥ हौं राजन मंगों यहै। इह मेरी अरदासि॥
पुहकर की कहै तपसनी। रूप रंग की रासि॥

छं०॥ ४८०॥ रू०॥ २३४॥

अरिल्ल॥ पिह सनेह सपून सबानिय। देवनि भूमिन सब्ब समानिय॥
सो रति मान थटे घन डंबर। असय मद्धि निज उज्जल अंबर॥

छं०॥ ४८१॥ रू०॥ २३५॥

दूहा॥ उज्जल पष दसमी दिवस। अरु दशरथ के नंद॥
नयर बंद्ध अरु कंध दस। रचिकैं किए निकंद॥

छं०॥ ४८२॥ रू०॥ २३६॥

दीप माल दीपै सुरग। ग्रह ग्रह महल अबास॥
हरिपुर हर मानत मनह चितवत चिंतत बास॥

छं०॥ ४८३॥ रू०॥ २३७॥

बीसलदेवजी का पुष्कर में बनिकसुता गौरी का सतीत्व भ्रष्ट करना और उसका उनको दावन होने का शाप देना॥

कवित्त॥ एकादसमी दिवस। देव नर नाग सब्ब मिल॥
सुर सकव तजि वास। आनि पुहकर प्रसाद पिल॥
तहां बनिक नंदिनी। पुचि गवरी तप मंड्यौ॥
दिष्षि ता ह बीसल नरिंद। बढि मार प्रचंड्यौ॥

२३४-३७ पाठान्तर-हों। दहै। अरदास। दै। तपशनी॥ २३४॥ मुरिल्ल। सवांनिय। सवांनीय। संवानीय। सब। समानिय। मांन। मधि। उजल॥ २३५॥ नैर। बधं। अरि। निकंद॥ २३६॥ सुरंग। चिंतवत्त॥ २३७॥

२३८ पाठान्तर-एकादशमी। दाव। मिलि। पास। आंनि। पिलि। देषि। द्वादशी। असू। सद। तितहिं। दिषिति। तहु। मंन।। कहुं॥

द्वादसी दिवस दिन अस्त करि । असद सद्द कीनी न्रपति ॥
जित तित्त दिष्षि मिच्छि मन दुच्चित । न थिय राज कछु छिन विपति ॥
छं० ॥ ४८४ ॥ रू० ॥ २३८ ॥

पद्धरी ॥ बर विमल लोक पुष्कर प्रकास । सुर नर सु नाग रिषि मुनि अवास ॥
धर धरम करम सुभ परम पाइ । जय सुर चवंत गुन अगम गाइ ॥ छं० ॥ ४८५ ॥
तिथि अगनवार दिन कर प्रकास । गय द्वार तपनि करि कपट पास ॥
तन रचित नीर उर ध्यान देव । न्रप मानि रच्छ करि वर अषेव ॥ छं० ॥ ४८६ ॥
बढि विकल झाल तम धूम नैंन । गच्चि कुस सकुध्य दइ दुसिष बैंन ॥
धर हरति अंग जल धार भार । चथ पटकि गंग जट समुष पार ॥ छं० ॥ ४८७ ॥
धरि ध्यान ध्यान तिन अगनि ईस । षंडे सु जग्गि तंफे जगीस ॥
रवि पदम पाय सासन सुद्दढ । उर धरे देव तिन देव गूढ ॥ छं० ॥ ४८८ ॥
जुग पानि नाभि तारी लगाय । रमि द्रिष्टि द्रष्टि गिरि बंभ राय ॥
तिर पुटिय भाल ग्रिल कमलमूर । इच्छ भांति ताव तप तपनि जूर ॥ छं० ॥ ४८९ ॥
तप चवल मुक्कि किय विरथ काम । कर मंझि राज मुक्क आप ताम ॥
छं० ॥ ४९० ॥ रू० ॥ २३९ ॥

दूहा ॥ पुची बनिक सराप दिय । भर पुष्कर नर लोइ ॥
असुर होइ बीसल न्रपति । नरपलचारी सोइ ॥
छं० ॥ ४९१ ॥ रू० ॥ २४० ॥

गौरी का बीसलदेवजी को भयभीत देखकर कहना कि तुम्हारा पोता तुम्हारी सुकीर्त्ति करैगा ॥

दूहा ॥ दिष्षि राज भय भीत तन । तन मन धूजत तथ्य ॥
मो उद्धारन पय गहन । कथ कुसुमन वर कथ्य ॥
छं० ॥ ४९२ ॥ रू० ॥ २४१ ॥

२३९ पाठान्तर-वर । प्रकाश । रिष । करकम । पाय । गाय । अनग । विन कर । ध्यांन । ज्वाल । नूंन । कुश । सकुथ । दय । बैन । बेंन । हरत । पिट्टि । ध्यांन ध्यांन । जंगि । तंडे । तंभे । सुद्दढः । पांनि । नाभा । द्रष्टि द्रष्टि । राइ । तरपटीय शील शिलकमल मूल । नांति । तप प्रवल मुनिं कियय विरथ बंम । सराय । तांम ॥
२४०-४१ पाठान्तर-वणिक । नृपति । नर भष्यन करे सोय ॥ २४० ॥ दिषि । तथ । कथ । कुसुम । चर । कथ ॥ २४१ ॥

कवित्त ॥ देव चरित रमि धाइ। इक्क कर चीय मड्डि धरि ॥
सु रचि तिथ्य अडसट्ठि। मान पञ्चकर प्रकास करि ॥
दिग अंबर उर धारि। तारि तारी तप तारनि ॥
मन सुर भाग समान। लाइ राष्यै परि पारनि ॥
वर तर्प चंद अन दर्प करि। तामस द्रिग विकराल मन ॥
सम गवरि अंग अँग सिष उसिष। नृपति समंनन असुर बन ॥
छं० ॥ ५०५ ॥ रू० ॥ २४९ ॥

शाप से विमुक्त होने के विचार से बीसलदेवजी का गोकर्ण की यात्रा के लिये बीसल सरवर पर प्रस्थान करना ॥

दूहा ॥ तजि नरिंदं अजमेर पुर। चित गोव्रन चर थान ॥
बीसल सरवर ऊपर। बीसल दिय प्रस्थान ॥
छं० ॥ ५०६ ॥ रू० ॥ २५० ॥

तपस्विनी के शाप से बीसलदेवजी की बुद्धि का चल विचल होना ॥

दूहा ॥ काम कुमत्तौ उप्पनैं। दीय तपसनी स्राप ॥
बीसल दे बुधि चल विचल। प्रगटि पुब्ब कै पाप ॥
छं० ॥ ५०७ ॥ रू० ॥ २५१ ॥

महाकाव्यादि के पठित विद्वानों का चंद कवि पर तो नहीं किन्तु इन दोष देनेवालों की कुशाग्र बुद्धि पर बड़ा आश्चर्य होगा क्योंकि संस्कृत काव्यों तथा अन्य बड़े बड़े ग्रंथों में प्रायः ऐसे उदाहरण मिलते हैं। देखो माघ के चतुर्थ सर्ग के २१ वें श्लोक में सहरितालसमाननवांशुकः। दो वार प्रयोग हुआ है और रघुवंश के दूसरे सर्ग के श्लोक ३१ की अंत की पंक्ति चित्रार्पितारम्भइवावतस्थे ॥ कुमारसंभव के तीसरे सर्ग के ४२ वें श्लोक में भी महाकवि कालिदासजी ने ऐसाही प्रयोग किया है ॥ तथा रघुवंश के सातवें सर्ग के ६ श्लोक से लेकर ग्यारहवें ११ तक के सब श्लोक जैसे के तैसे कुमारसंभव के सातवें सर्ग के सत्तावनवें श्लोक से बासठवें तक महाकवि कालिदासजी ने प्रयोग किये हैं ॥

२४९ पाठान्तर-द्वार। इक। रहिय। रहीय। मधि। तिथ। अडसठि। मांन। उधारि। समांन। रषे। पारन तर्प्प। तर्प्प। अंग अंग ॥

२५०-५१ पाठान्तर-तजिं। नरेंद। चिंत। गऊक्रन। थांन। उपरे। प्रस्थांन ॥ २५० ॥ कांम। कुमतो। ऊपनैं। दिय। तपशिनी। सराप। कों ॥ २५१ ॥

बीसलदेवजी को सांप का काटना और उससे उनका मरना ॥

दूहा ॥ वार रवी तिथि सत्तमी। चढ़ि रथ सुर मतंग ॥
तिहि वेरां आयौ कहै। डेरा मांहि पनंग ॥
छं० ॥ ५०८ ॥ रू० ॥ २५२ ॥

कवित्त ॥ देषि राज करि कोध। बान को दंड धरिय कर ॥
बेधि पनग फन जिक्कि। पर्यो धर नरफन बेसिर ॥
कुट तिहि बेर मतंग। षेल देखन कौं धायौ ॥
एक मोजरी मद्धि। पनग फन आनि लकायौ ॥
फिरि राय आय हैंवर चढ्यौ। पद्दरत मोजे पग डस्यौ ॥
भवितव्य बात आघात गति। इतनी कहि राजन चस्यौ ॥
छं० ॥ ५०९ ॥ रू० ॥ २५३ ॥

दूहा ॥ ओषद मंच अनंत जप। कितने करे उपाय ॥
ज्यौं ज्यौं तन लहरत चढन। त्यौं त्यौं दुचितौ राय ॥
छं० ॥ ५१० ॥ रू० ॥ २५४ ॥

कवित्त ॥ राज मरन उप्पनो। सब्ब जन सोच उपन्नौ ॥
पट रागिनि पावार। निकसि तब घी सत किन्नौ ॥
तिन मुष इम उचर्यौ। होइ जदवनि सपुत्तय ॥
सो असीस इह फुरो। तुम्म भोगवहु धरत्तिय ॥
जिन रथी मद्धि ऊठे असुर। धवै ज्वाल तिन मुष विषय ॥
नर भषय जहां लसकर* सहर। मिल्ले मनिष ते ते भषय ॥
छं० ॥ ५११ ॥ रू० ॥ २५५ ॥

२५२ पाठान्तर-तिष। सपतमी। तिथि। कहो। डेरां। मांहि। माहि। पबंग ॥
२५३ पाठान्तर-बांन। बंड। नाग। छिक्र। बेंसिर। कुट्यो। सं० १७७० और १६४० में "मिलि राजन मोजदीय"। को। आयौ। मधि। पनंग। आंनि। आय राय ॥
२५४ पाठान्तर-उषद। उपाद। ज्यों ज्यों। लहरी त्यो त्यो। दुचितो ॥
२५५ पाठान्तर- ऊपनौ। उपनौ। उपंनौ। निकसी। कीनौ। इह। उचस्यौ। सपुतय। स पुतह। फुरीं। भोगवो। धरतय। इन। मधि उठै। भषै। शहर। मिले। मनुष। भषै ॥

* हिं० लसकर (SK. लश To be skilful or clever, to do anything skilfully and scientifically or लस To play or sport, to work and कर Who or that does, makes or causes.) Hence a camp or cantonment &c.